

Write

Notes

Date _____

Notes

प्रश्न १।

सत्यार्थ-विवेचन ।

॥ मन्त्रोच्चारणद्वयात्मानन्दोत्पत्तिरिति स्वामिनः संकीर्तनः ॥

[सर्वविधकारः संकलनकर्ताधीनः]

धर्म संस्थान, स्वयंसेवा, मेस, उत्तर प्रदेश.
भारत।

बोधोपनिषद् । (2003 ईस्वी)

Date	सत्यार्थ-विवेचन	Notes
	विषयानुक्रमशिका।	२
क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
१०	मूलक स्पष्टीकरण, शब्द प्रकार।	६८
१८	चार प्रमाणा, कर्मकाण्ड	६८
१९	उपासनाकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, निष्कामकर्म	
२०	वेदविद्या का अध्ययन प्रकार।	५०
२१	विद्याध्ययन में विघ्न।	५२-५५
२२	व्यायाम महत्व, श्रेष्ठिय, पितृदि तीर्थ	५५
२३	हवन कुण्ड, होम द्रव्य, विवाह की सामु	५६
२४	वर्षा निर्धारण।	५६
२५	धन के प्रपञ्च का निवेद्य, निवेद्य।	५८
२६	जीवनचरित्र निवेद्य, जीवन का उद्देश में स्थान।	५८
२७	दैनिक चर्चा।	६०, ६१
२८	नियोग, स्त्री स्त्रियों के परस्पर निवेद्य।	६२
२९	संन्यास की योग्यता व अवस्था।	६३-६४
३०	साक्षी।	६६
३१	अस्मृत अध्ययन परम्परा।	६८
३२	वेद। योग सिद्धि, प्राणा।	६९, ७०
३३	शरीर	७१
३४	परमात्मा, इन्द्र विकार वाला शरीर।	७२, ७३
३५	नरक, स्वर्ग, व मर्त्यलोक।	७४
३६	सृष्टि का आरम्भ।	७५
३७	ब्रह्मादि, मोक्ष।	७६, ७७
३८	महामहामह।	७८

Date	सत्यार्थ-विवेचन	Notes
	विषयानुक्रमशिका।	३
क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
३९	पशु, हत्या निवेद्य।	७९
४०	महा निवेद्य, कान्यकुब्ज का भोजन में पारवण्ड।	"
४१	चेदह समुत्सास निवेद्य ज्ञान का प्रमाण।	८०
४२	संसार की शिक्षा, संस्कृत महत्व।	८१
४३	काशी के मान अन्तर का महत्व महत्व।	८२
४४	शंकराचार्य।	८३-८४
४५	राजा विक्रमादित्य का महत्व।	८४
४६	राजा भोज का महत्व और संजीवनी रहस्य।	८६
४७	महामह राजनीति का सामना पर आक्रमण।	८८-८९
४८	चार ब्राह्मणों द्वारा सीहान आदिक क्षत्रियों की कल्पित।	८९
४९	मुहम्मद गौरी व कुतुबुद्दीन।	९०
५०	औरंगजेब तथा अकबर।	९०-९१
५१	अंगरेजी राज में कथारि सुख भरा।	९१
५२	सत्य भाषणों के पढ़ने में दोष नहीं मिले।	९१
५३	पञ्च व्याख्या।	९००
५४	शंकराचार्य साधुदासिक सुख नहिं थे।	९०१
५५	शंकराचार्य व जय स्वाम्यन्व दिग्विजय मिथ्या कल्पित ग्रन्थ।	"
५६	नाटक शरीर के स्वप्न नाम नहीं बदलना।	९०२
५७	श्री कृष्ण धर्मात्मा पुरुष थे।	"
५८	सुवास पुत्र पुत्र के देव रूपी शक्ति के जन्म के पहिले मर गया था।	"

Date

सत्यार्थ-विवेचन. Notes

क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
५६.	शुद्धि की उत्पत्ति हिमालय में हुई थी।	१०३
५७.	दुष्ट कर्म करने वालों का नाम शङ्खसवदेव था।	१०४
५८.	रजाधन और फेर की सम्प्रवृत्ति का विषय है।	१०५
५९.	समक व पौन सेटी पर कर लगाने का निवेदन १०६	१०६
६०.	दुश्चारी व दोष को कठोर दण्ड।	१०७
६१.	न्याय प्राप्ति के लिये शासक राज पर कर लगाने का निवेदन।	१०८
६२.	पुलिस के प्रबन्ध से सत्यार्थ होने का रक्षा।	१०९
६३.	पुलिस की निन्दा।	११०
६४.	पशुधन निवेदन।	१११
६५.	राजा समार के न्याय की प्रशंसा।	११२
६६.	राजा भरत के न्याय की प्रशंसा।	११३
६७.	प्रजाताप का श्रीमि प्राप्त।	११४
६८.	कारिग्रम व्यवस्था का स्वीकार।	११५
६९.	ब्राह्मण आदि शब्द वर्णान्वक हैं, मनुष्य व पुद्गादि जाति वाचक हैं।	११६
७०.	स्वार्थीने से न धर्म घटता है न बढ़ता है।	११७
७१.	वार्षिक उत्सवादि को से धन का प्रपञ्च।	११८
७२.	केवल अंगरेजी पुस्तकें पढ़ने से कृतकृत्यता।	११९
७३.	मानना भ्रान्ति।	१२०
७४.	वेदादिक सत्य शास्त्रों के पढ़ने से ही कल्याण।	१२१

Date

Notes

3

सत्यार्थ-विवेचन।

५

मोक्षम्।

सर्व शक्तिमते जगदीश्वराय नमः।

प्रस्तावना।

सत्यार्थ प्रकाश सर्वप्रथम १८७५ ईसवी में ई. एच. के. आकार में, १८ पोस्ट के छापे में मुद्रित होकर मुंशी हीरचंद लाल के, मोहला रामापुर बनारस में स्थित स्टार प्रेस से प्रकाशित हुआ था। स्वामीदयानन्द सरस्वती जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश के दसवें समुद्रास के अन्त में चौदह समुद्रास लिखे जाने का उल्लेख किया है परन्तु सुरदाबाद निवासी तत्काली डिप्टी क्लर्क श्री राजा जयकृष्णदास जी ने सत्यार्थ प्रकाश के बारह समुद्रास ही छपवाये थे। सम्मत १८३१ विक्रमी तदनुसार १८७५ ईसवी में प्रकाशित, यह प्रथम संस्करण अत्यन्त महत्व पूर्ण ग्रन्थ है। अतः सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण को अपरिहार्य कारणों से निरस्त कर, स्वामीदयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश का द्वितीय संस्करण १८४० विक्रमी तदनुसार १८८४ ईसवी में प्रथम बार प्रकाशित हुआ। यह संस्करण वैदिक यंत्रालय प्रयाग से मुंशी समर्थ दान द्वारा प्रकाशित हुआ था। सन १८६० तक वर्तमान सत्यार्थ प्रकाश में लगभग १०० परिवर्तन और परिवर्द्धन किये जा चुके थे। सन १८६० ईसवी में मुंशी आर्य समाज

सत्यार्थ-विवेचन।

६

लौरेंस रोड अमृतसर से सन १८८७ ई १८८७ ईसवी में प्रयाग से प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश मिला, जिसे कालान्तर में "ग्रार्थ साहित्य प्रचार न्यास" ४५५, रवाड़ी बावली दिल्ली ने प्रकाशित किया।

स्वामी अहानन्द जी महाराज अपने पत्र ने अपने पत्र "सद्बुध प्रचारक" में सत्यार्थ प्रकाश प्रथम संस्करण पर के महत्व पर अपने द्वारा लेखक में पर्योक्त प्रकाश डाला था तथा सत्यार्थ प्रकाश प्रथम संस्करण पर एक पुस्तक भी लिखी थी। पीछले गुरुदत्त जी इसके बार बार निरन्तर अध्ययन से ईश्वर निष्ठ वैदिक विद्वान बन गये थे। सन १८७१ ईसवी तक, स्टार प्रेस, रामपुर बनारस से प्रकाशित, १८७५ ईसवी का "सत्यार्थ प्रकाश का प्रथम संस्करण" बम्बई ग्रार्थ समाज (काकड़वाड़ी, गिरगांव) के तत्कालीन मंत्री श्री परशुराम जी दुधात के पास बड़ी अच्छी दशा में था।

सन १८७५ ईसवी सत्यार्थ प्रकाश प्रथम संस्करण के प्रकाशित होने का वर्ष है। इसी वर्ष अर्थ समाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा की गई थी। अर्थ समाज बम्बई (काकड़वाड़ी) में अर्थ समाज स्थापना दिनांक, ७ अप्रैल

सत्यार्थ-विवेचन।

प्रस्तावना।

१८७५ ईसवी आदि तह। सन १८८१ ईसवी में "का समाज बम्बई" द्वारा "न्यास" बनाकर एक "कंशर पत्र" द्वारा वर्तमान भूमि प्राप्त की, यह न्यास १३ अप्रैल १८८८ ईसवी को, पञ्जीकरण ग्रीष्म की बम्बई, २. अम्बक द्वारा पञ्जीकृत हुआ। न्यास के पञ्जीकृत पत्र के में श्री स्वामी दयानन्द जी सरस्वती द्वारा ७ मार्च १८७५ ईसवी को अर्थ समाज की स्थापना किये जाने का उल्लेख है। दक्षिण भारतीय पञ्जीकृत पञ्जीकृत के अनुसार ७ मार्च १८७५ ईसवी को रविवार माघ कृष्ण अमावस्या संवत् १८३१ विक्रमी था। उत्तर भारतीय पञ्जीकृत साह रविवार फाल्गुन कृष्ण अमावस्या संवत् १८३१ विक्रमी, शके १८८६ फसली १२८ तथा २४ फाल्गुन १८३१ विक्रमी था।

सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण पर मैं ने संवत् २०३१ विक्रमी तदनुसार सन १८७८ ईसवी में "आदिम सत्यार्थ प्रकाश के महत्व पूर्ण संस्करण तथा अर्थ समाज स्थापना का प्रामाणिक दस्तावेज" नामक पुस्तक लिखकर प्रकाशित की थी। इसमें अर्थ समाज बम्बई (काकड़वाड़ी) के न्यास की "पञ्जीकरण" की प्रतिलिपि प्रकाशित की थी। २८ वर्ष पश्चात् विभिन्न विषयों सहित "सत्यार्थ-विवेचन" पुस्तक लिखी इसमें बम्बई

Date

Notes

सत्याधि-विवेचना २०

Fees as follows Hari Desmukh,
 Registration fees Sewak Lal Kurson
 RS 14-0 Das, Sunder Das
 Copying fee RS 1.14 Dharamsi and
 (127 folios) Total Pranjiwan Das
 RS 15.14. 1295A Kalyandas, all of
 Sub Regis Sd/- Bombay Hindu
 A. Trimback, inhabitants (Here
 Sub-Registrar of in after called the
 Bombay. "Trustees") (one)
 Rao Bahadur Gopal the one part and
 Rao Hari Desmukh, the member for
 executing party the time being of
 Government pensioner Bombay Ara Samaj.
 residing at Poona, (Here in after called
 now in Bombay the Samaj) of her
 admits execution the other part
 He is known to the Where as in or
 Sub Registrar. about the Christian
 Sd/- Gopal Rao gear one thousand
 Desmukh. eight hundred
 Sewak Lal Kurson Seventy five a

Date

Notes

सत्याधि-विवेचना २१

Das, executing party certain in habi-
 merchant, residing Tent of Bombay
 at Jagjiwan Kirka street being desirous
 admits execution. He of establishing
 is known to Sub-Registrar.
 Sd/- Sewak Lal Kurson Das. a "Samaj" in
 Soondar Das Dhurum Say Bombay with
 residing Executing party the object and
 residing at Hornby row for the purpose
 admits the execution. He of carrying out
 is known to Sub Regis- religious, social
 trar. and moral reforms
 Sd/- Soondar Das Dhurum reforms on the
 Say. authority of the
 Jeewan Das Moolji Vedas as explain-
 Executing party, Broker ed and taught
 residing at Hornby by the late revered
 Row, admits execution. Pandit Dayanand
 He is known to the Saraswati Swami.
 Sub Registrar. A meeting of the
 Sd/- Jeewan Das promoters of the
 Moolji. intended institu-
 Pranjiwan Das tion was held

Date

Notes

सत्यायु-विद्वान् । १३
 Kalian Das executing on the seventh
 party, Master residing day of march
 at Pydhowni, admits one thousand
 execution. He is known eight hundred
 to the Sub-Registrar. and seventy
 Sd/- Pranjeevandas five under
 Kalian Das. the Presidency
 Mr. Harischandra of the said
 Shamrao translator Pandit Daya Nand
 and interpreter High. Saraswati Swami
 Court, residing at and at Suchmest
 Kakadwadi and known ing the following
 to the Sub-Registrar, principles were
 examined as to identity adopted.
 Of Sewaklal Cursandas 1. God is the foun-
 and Pranjeevandas Kali- tain of true know-
 Das. ledge and the
 Sd/- Harischandra
 Shamrao.
 13th April 1888. of all things know-
 Sd/- A. Trimback. able.
 Sub-Registrar of Bombay. 2. Worship is
 Registered no 1255 at alone due to (God)

Date

Notes

सत्यायु-विद्वान् । १३
 pages 241 to 247, Vol who is truth all
 248 of book. no. 1 knowledge all
 Sd/- A. Trimback. bantitude (Torn
 Sub-Registrar of Bombay. portion) All mighty
 just (Torn Portion)
 incomparable the
 --- (Torn Portion) all
 pervading Omni
 scient Imperish-
 le immortal, etc
 rnal holy and
 the Cause of the
 Universe.
 3. The vedas are
 the Books of true
 Knowledge and
 it is the paramo-
 unt duty of
 every one Arya
 to read or hear
 them read to
 teach and preach
 them to others.

Date

Notes

सत्याधि-विवेचना

१४

4. An ariya should always be ready to accept truth and renounce untruth when discovered.

5. Truth arrived at after Conscientious deliberation should be his guiding principle on all action.

6. The primary object of the Samaj is to do good to the world by improving the physical, intellectual, moral, social and spiritual condition of mankind.

7. Due love for all and appreciation of justice. An ariya should manifest in his behavior

Date

Notes

सत्याधि-विवेचना

१५

towards other.

8. He should not be content with his own improvement but a look for it in that of others.

9. He should endeavour to diffuse knowledge and dispell ignorance.

10. He should not be content with his own improvement but a look for it in that of others.

11. In matters which effect the general, social well being of our race He ought to discard all difference and not allow to enter his individuality to interfere but

सत्याग्रह-विवेचन।

२४

in strictly personal matter's every one may have his own way, and it was in the said meeting resolved and according to such resolution a "Samaj" to be called the "Bombay Arya Samaj, A Committee of management consisting of certain members was appointed and where as was established and in order to carry out the business and objects of such Samaj. A Comitee of management consisting of certain members was appointed and where as a furtherance of the object aforesaid the Samaj from time to time shall raise and receive subscriptions and donations and where as by an indenture bearing date the twenty eighth day of February one thousand and four eight hundred and eighty two and make between Gopal Das Karamsi of the one part and the trustees of the other part in consideration of the sum of rupees Six hundred

सत्याग्रह-विवेचन।

२५

thousand and four hundred paid by the trustees to the said Gopal Das Karamsi out of the aforesaid Subscriptions and donations, the said Gopal Das Karamsi granted to ^{the} present trustees or the trustees, that they might be appointed as such of them in the event of his or their trusteeship or trusteeships in the event of "Samaj" proving him or them unfit to carry out the trust or in the event of his (death) or their death. That piece or of land of ground with the hereditaments standing the situate at Kakadiwadi in the Sub District Mandavie out side the Fort of Bombay, and registered by the collector of land revenue, under no, 232 (Torn Portion) and 17418 New) and assessed by the Municipal Commissioner no, 2 and 3 containing by ad-measurement Nine hundred and eighty nine ~~sq~~ square yards by the same little more or less as bounded.

महाराष्ट्र-विधान

as follows. That is to say on or towards east the east by the property Bhaidas Kaki Das Nagar on towards the West by the public road and called Kakadwadi Street on or towards the (South by the property) North by the Gingsaumpalce Court and on or towards the South by the property of Swami Ramangacharia and Poorman Acharia and with which formerly and are now occupied by the said Gopal Das Karamsi with the apportionances to hold the same unto and to use of the "Trustees" Successors that declaration of Trust should be executed which the trustees have consented to do on manner here in after appearing now this indenture witnesseth that in pursu of the agreement and in consideration of the premises the trustees and each of them doth hereby declare that the trustees their successors or assigns shall stand and be seized and possessed and premises

महाराष्ट्र-विधान

here in before decribed for and on behalf of the "Samaj" upon the trusts and subject to the powers and provisions declared of a concerning the same in the afore said resolutions and the rules which are now or may at anytime hereafter be passed by the "Samaj" in accordance with the existing or any future rules made or to be made for the conduct of the business of the "Samaj". They also declare that the trustees shall not on any account raise money on the said premises and that they shall manage the trust according to the majority of opinion of the "Samaj" and in conformity with the object of the "Samaj" and each of the said Trustees doth hereby for himself his executors and administrators conversant with the members of the "Samaj" that they the trustees have not at any time done or knowingly suffered or been party or privy to a back door matter or thing whereby they

सत्याधिदिवक

or any of them have or has been prevented from executing these presents in witness where of the said parties to these presents here unto have set their hands and seals the day and year first above written.

Signed Sealed and delivered by the said.

Sd/- Gopal Rao Hari Desmukh. (Seal)

Sd/- Sewak Lal Kurson Das. (Seal)

Sd/- Soondar Dabdharamsi, (Seal)

Sd/- Jawandas Modji. (Seal)

Sd/- P. (Torn Portion) Kalidas. (Seal)

Compared by

Sd/-

True copy.

The words and on line 22 page 241 Merchant in line page 243 Col 2, death in him 18 page 244 & in line 5 South by the property in line 5 & 6 page 245 having been written by mistake at time of Copying have been placed in bracket brackets. The word one in line 3 Page 242 having been erroneously written

सत्याधिदिवक

at the time of Copying has been placed in brackets & latter's Pundit line 4 Page 245 having been omitted at the time of Copying have been written in red ink.

Sd/- A. Trimback

Sub Registrar of Bombay.

Copied by Sd/-

Read & Compared by

Sd/-

True Copy.

No. of Correction 9 (Nine) No. 5 (1, 2, 5, 7, & 8)

and no. 8 (3, 4, 6 & 9) alterations

Sd/- A. Trimback

Sub Registrar, of Bombay.

(Seal)

Date

सत्याधि-विवेचन

28 Notes

को स्वीकार करते हैं। ये उप दयानन्द सस्वती
पञ्चीकरण अधिकारी के स्वामी के उपेक्षित
परीचिन्ते हैं। वेद प्रतिपादित व्यवस्था

ह०/- कृष्णदास सुन्दरदास के अनुसाधार्मिक
धर्म भी सामाजिक तथा नैतिक

जीवनदास मूलजी, क्रिया- सुधारों की दृष्टि से
नित करने वाला पक्ष, अमीरों के सम्राट के
बाल, हर्म की री, बम्बई प्रवृत्तों की एक समा, उक्त
निवासी, सम्पन्न व्यवस्था परिष्ठत दयानन्द सस्वती
को स्वीकार करते हैं, ये स्वामी की व्यवस्था में

उपपञ्चीकरण अधिकारी सम्पन्न हैं
के परीचिन्ते हैं। सुधारों के इच्छुक

ह०/- जीवनदास मूलजी, व्यक्तियों की समा

प्राण जीवन दास, कल्याण सात मार्च, १९०५
दास, क्रियान्वित करने एक हजार आठ सौ

वाला पक्ष, अध्यापक पिढ़नी विन हतर ईसवी में
बम्बई निवासी, सम्पन्न सम्पन्न हैं जिसे में

व्यवस्था को स्वीकार करते हैं, स्थापित "समाज" के
ह०/- प्राणजीवन दास निम्नीरित उद्देश्य

कल्याण दास। तथा नियम निर्धारित

पी हरिश्चन्द्र इवाक शवधनु- किये गये।

वक्त तदा धिभाषिया, उद्घा- १. सब सत्य विद्या और

न्यायालय, काकड़वाड़ी जो प्रत्येक विद्या से जो

निवासी, उप पञ्चीकरण जाते हैं उन्नत आदि मूल

Date

सत्याधि-विवेचन

Notes

अधिकारों के परिचित तथा परमेश्वर हो।

प्राण जीवनदास तथा सेवक २. ईश्वर सच्चिदानन्द

लाल कृष्णदास परीक्षण स्वरूप, निराकार सर्व

साक्षी। शक्तिमान्, न्यायकारी

ह०/- हरिश्चन्द्र श्याम शव। दयालु, अजन्मा, अनन्त

१३ अप्रैल १८८८ ईसवी। अन्तर्दि निर्तिकार, अनादि

ह०/- २. अन्तर्भव, अनुपम, सर्वोधार, सर्वोक्त

उप पञ्चीकरण अधिकारी, बम्बई। सर्वव्यापक, सर्वान्तर्गामी

पञ्चीकृत संख्या १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००।

पुस्तक संख्या १ वाक्यमसंख्या १८ पवित्र और मुक्तिकर्ता

पृष्ठ संख्या २४९ से २४६ तक। है उसी की उपासना

ह०/- २. अन्तर्भव, करनी योग्य है।

उप पञ्चीकरण अधिकारी, बम्बई। वेद सब सत्य विद्याओं

की मोहर, का पुस्तक है, वेद का पढ़ना

पढ़ना और सुनना सुनना

सब आर्षों का परम धर्म है।

३. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा अग्रतः

रहना चाहिये।

४. सब काम धर्मांनुसार वर्णानुसार सत्य और असत्य को विचार

कर करके चाहिये।

५. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है।

अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उत्थित करना।

६. सब से पीछे पूर्वक धर्मनुसार दया दौखत होना चाहिये।

७. सविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

ह प्रत्येक को स्वयं ही उत्तीर्ण में संतुष्ट रहना चाहिये किन्तु सब की उत्तीर्ण में अपनी उत्तीर्ण समझनी चाहिये।
१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वाधिकारी नियम पालन करने में परतन रहना चाहिये प्रत्येक अधिकारी नियम में सब स्वतंत्र रहें।

और यह था कि उक्त समाज ने नीतिव्यवस्था कि इस प्रस्ताव के अनुसार "समाज" जो कि नाम से प्रख्यात है, स्थापित किया गया तथा कार्य संचालन के लिये कुछ सदस्यों को "प्रबन्धक समिति" नियुक्त की गई तथा जो कि पूर्वोक्त निवेदन तथा उद्देश्यों के प्रचार के लिये समय समय पर "समाज" के लिये चन्दा तथा दान प्राप्त करने की व्यवस्था करी तथा उन्हें प्राप्त करेगा।

वैसा कि अष्टादस फरवरी एक हजार आठ सौ तथा सौ इसवी को गोपाल दास करमसी (प्रथम पक्ष) तथा "द्वितीय पक्ष" के मध्य एक करार हुआ, जिसके द्वारा छः हजार चार सौ रुपये "द्वितीय पक्ष" द्वारा उक्त गोपाल दास करमसी को पूर्वोक्त दान और चन्दे में से दिये गये।
उक्त गोपाल दास करमसी ने स्वीकार किया कि वर्तमान "द्वितीय पक्ष" अथवा "द्वितीय पक्ष" उनके स्थान पर "द्वितीय पक्ष" अथवा सबको "द्वितीय पक्ष" के प्रवर्तित "न्यास" द्वारा समाज का कार्य संचालन में सम्मिलित अथवा उनकी मुख्य अथवा उन सबकी मुख्य होने पर

न्यासी नियुक्त कर सकत है।

उत्तराधिकार में वह भूमि अर्थात् यह भूमि खण्ड अर्थात् कोट के बाह्य भाग में माण्डवी स्थिति में कावड़ वड़ी में स्थित है तथा वैष्णव कलकट संस्था २३२ [अष्टपष्ट] तथा १७७ [नवीन] में पञ्चकुत है स्थिति स्थल की मंडार संस्था २ तथा दुष्मान्धीयित है।
नाप में नौ सौ चत्तरी वर्ग गज के लगभग है तथा इसके सीमा लगभग यह है। पूर्व में भाई दास का फौजस भाग की सम्पत्ति, पश्चिम में जनमन का कड़वली गली, सम्पत्ति के ठीकाने में। उत्तर में गिरगांव पुलिस कोट दोहरा में स्वामी स्वामी सम्पत्ति तथा पूर्व में स्वामी की सम्पत्ति। पश्चिम में तथा पूर्णोत्तर की सम्पत्ति।

सम्पत्ति को पूर्वोक्त से ही उसके भागों सहित उक्त गोपाल दास करमसी के अधिकार में थी तथा अब है, "न्यासी गरा" तथा उनके उत्तराधिकारियों द्वारा "समाज" के उपयोग के लिये सदैव के लिये स्वीकृत है।

वैसा कि दोनों पक्ष इच्छुक हैं कि "न्यास" की घोषणा को क्रियान्वित किया जाव जिसके कि न्यासी गरा में यहाँ उपस्थित होते समय सम्मति व्यक्त की थी। अब यह करार पत्र साक्षी साक्षी है कि सम्मति का पालन करने तथा क्षेत्र का आदर करने के विषय में "न्यासी गरा" तथा उनमें से प्रत्येक "न्यासी" वह घोषणा करता

Date

सत्यादि विवेचन । २० Notes

कि "न्यासीगशा" अथवा "न्यासी" तथा उनके उत्तराधिकारी अथवा निर्वहक "समाज" के अथवा "समाज" के लिये पूर्वोक्त क्षेत्र के विषय में गृहीत अथवा उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति का फलन प्रतिपादन के लिये अधिकृत सम्पत्ति का पालन करेंगे। वे यह भी घोषणा करते हैं कि पूर्वोक्त क्षेत्र के विषय में किसी भी प्रकार से धन प्राप्त नहीं कर सकेंगे। वे "समाज" की सान्धवियों तथा उद्देश्यों के अनुसार वहमत के अनुसंधान व्यवस्था करेंगे। "न्यासीगशा" से संप्रत्येक स्वयं या उनके उत्तराधिकारी कार्य सम्पादन करें। वे "समाज" के सदस्यों के अलीभूत शरीर रहें। उन्होंने ने अर्थात् "न्यासीगशा" ने कभी भी सामूहिक अथवा व्यक्तिगत रूप से सम्पत्ति के "करारपत्र" कभी नहीं पहुँचाये हैं तथा उन्होंने अथवा उनके से किसी ने भी व्यक्तिगत लोगों को कथि करने से भी कभी नहीं रोका है।

साक्षी स्वरूप उक्त पत्रों के हस्ताक्षर, अंगुलिचिह्न, मुहर, दिन तथा वर्ष के ऊपर अंकित हैं।

५-६

उपर्युक्त लोगों के हस्ताक्षर, मुहर, मुद्रांकित, तथा प्रतियां प्रदान कीं।

सं. गोपाल शर्मा हरदेव मुख, [मुद्रा]

Date

सत्यादि विवेचन

Notes

हं/- सेवक लाल कृष्णदास, [मुद्रा]
हं/- सुन्दर दास धरमसी (गुजरानी में) [मुद्रा]
हं/- जीवन दास मूल जी, [मुद्रा]
हं/- पी. [अस्पष्ट] कल्याणदास, [मुद्रा]
मिलाकर देखी गई।

हं/-

सत्य प्रति.

ब्राह्म "रुण्ड" २४१ पृष्ठ पङ्क्ति २२ में, मर्चेंट-पङ्क्ति में पृष्ठ २४२ पर कालम २ में "इष्ट इति" १८ पंक्ति पृष्ठ २४३ पर, रुण्ड पंक्ति पुर्ण "साध्य वहि हो प्राप्य" पंक्ति ६-६ पृष्ठ २४५ पर नकल के समय गलती से लिखे गये हैं तथा केष्ठक में हैं।

शब्द "न" पंक्ति ३ पृष्ठ २४३ अंगुलिचिह्न गवा है तथा केष्ठक में है और ऊपर लाल स्याही से अंकित है।

शब्द "और प्रच्छर" पंक्ति २ पृष्ठ २४२ पंक्ति में "निदिल" पंक्ति २ व पंक्ति १३ में कालम २ में पृष्ठ २४५ नकल के समय होड़ दिये गये हैं। ऊपर लाल स्याही से अंकित है।

प्रतिनिधित्व

हं/- सं. शम्भूदास

हं/- उपपक्षीक सान्धवियों के सम्बन्ध में प्रतिपदी गई तथा मिलाई गई।

सत्य प्रति.

संशोधन संख्या [१, २, ५, ७ तथा ८]
शुरूची गई संख्या [३, ४, ६ तथा १०] वर्तित.

हं/-

उपपक्षीक सान्धवियों के सम्बन्ध में

Date

सत्यार्थ-विवेचन.

3rd Notes

Date

सत्यार्थ-विवेचन.

3rd

Page

सत्य सत्यार्थ प्रकाश

श्री राजा जयकृष्ण दास ब्रह्मपुर

सी. एस. आई.

की

आज्ञानुसार

मुनशी हरिवंशलाल के अधिकार से इसका

प्रस महला रामापुर में छापी गई।

सन १८७५ ई.

बनारस

पहली बार १००० पुस्तकें.

मूल की पुस्तक ३)

Date

सत्यार्थ-विवेचन.

32 Notes

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

सन १८७५ ईसवी में "चरित्र" आकार में पहला संस्करण में मुन्शी हरिवंशलाल के इस्तेमाल पर सभल शमापुर बनारस से एक हजार सत्यार्थ प्रकाश प्रथम बार प्रकाशित हुआ। यह प्रथम संस्करण सत्यार्थ प्रकाश सन १८७९ ईसवी तक अर्थ समाज बम्बई, काकड़वाड़ी के तत्कालीन मंत्री श्री परशुरामजी दुधान के पास रखी दशा में था।

"सत्यार्थ प्रकाश" प्रथम संस्करण के पहिचानने हेतु विवरण निम्नलिखित हैं।

१. सत्यार्थ प्रथम संस्करण में कुल चार सौ पन्ने पृष्ठ तथा बारह समुदास हैं। चार सौ सात पृष्ठ प्रथम समुदास से बारहवें समुदास तक हैं। चार सौ पृष्ठ शुद्धि पत्र के हैं तथा दो पृष्ठ सूची पत्र के हैं। सर्व प्रथम नाम का पृष्ठ है। मुख पत्र के पीछे पृष्ठ भाग में राजा जय कृष्ण दास के पृथक् पृथक् क्रमशः तीन निवेदन छपे हैं।

२. प्रथम तथा द्वितीय पत्र में पृष्ठ में सूची पत्र है।

३. पृष्ठ एक से चार पृष्ठ पर्यन्त शुद्धि पत्र है।

४. पृष्ठ एक से छत्तीस पृष्ठ पर्यन्त प्रथम समुदास है।

५. छत्तीस पृष्ठ से छत्तीस पृष्ठ तक तृतीय समुदास है।

६. छत्तीस पृष्ठ से त्रिंशत् पृष्ठ तक तृतीय समुदास है।

७. त्रिंशत् पृष्ठ से एक सौ पन्ने पृष्ठ तक चतुर्थ समुदास है।

८. एक सौ पन्ने पृष्ठ से एक सौ चौदह पृष्ठ तक पञ्चम

Date

सत्यार्थ विवेचन

38 Notes

समुल्लास है।

१. एक सौ चौदह पृष्ठ से दो सौ बीस पृष्ठ तक
षष्ठ समुल्लास है।

२०. दो सौ छक्कीस पृष्ठ से दो सौ त्रिपन्न पृष्ठ तक
समुल्लास है सप्तम समुल्लास है।

११. दो सौ त्रिपन्न पृष्ठ से दो सौ छियासठ पृष्ठ
तक अष्टम समुल्लास है।

१२. दो सौ छियासठ पृष्ठ से दो सौ सत्तामवे
पृष्ठ तक नवम समुल्लास है।

१३. दो सौ अष्टानवे पृष्ठ से तीन सौ आठ पृष्ठ
तक दशम समुल्लास है।

१४. तीन सौ आठ पृष्ठ से तीन सौ छियासठ
पृष्ठ तक एकादश समुल्लास है।

१५. तीन सौ छियासठ पृष्ठ से चार सौ सात
पृष्ठ तक बारहवां समुल्लास है।

Date

सत्यार्थ विवेचन

39

Notes

(स्वामी दयानन्द सरस्वती विवरणक)

"संवत् १८८१ के वर्ष में दक्षिण गुजरात प्रान्त
देश काठियावाड़ मण्डलाका देश मोर्बीका राज्य
उदीच्य ब्राह्मणों के घर मेरा जन्म हुआ था।"

"घरङ्ग घरा नाम एक राज्य गुजरात देश में है।
इसकी सीमा पर एक मोरवी नगर है वहाँ मेरा जन्म
जन्म हुआ था मैं उदीच्य ब्राह्मण हूँ।"

"मेरे वहाँ नगर के बाहर एक बड़ा देवल है वहाँ
शिवरात्रि के दिन रात के समय बहुत लोग श्रुत
लेंते हैं और पूजा करते हैं। मेश पिता, मेरी बहुत मनुष्य
इकट्ठा हो।"

"फिर आठवें वर्ष में मेश यज्ञोपवीतकरण के
गायत्री संध्या और उसकी क्रिया भी किमि विम्वती दी गई थी।
और मुझे यजुर्वेद संहिता का प्रारम्भ करके कराके
उसमें से प्रथम छद्वाध्याय पढ़ाया गया था, और मैं कुल
में शैव भक्त था, उसीकी शिक्षा भी किता करते थे।"

"तब पिताजी को ज्ञा कि पूछा कि यह कथा कान्हा
कहते वा कोई दूसरा, तब पिता ने कहा कि क्यों पूछता
है तब मैंने कहा कि कथा काम हो देव तो चेतने है।"

"इतने में १६ वर्ष की अवस्था हुई तब जो मुझे
अग्नि प्रेम करने को लगे छद्म आत्मा विद्वान् मेरे चाचा
थे उनकी मृत्यु होने से अत्यन्त वैराग्य हुआ कि
संसार में कुछ भी नहीं है।"

"फिर गुप्तगुप्त संवत् १८८६ के वर्ष घर छोड़ के

संन्यास के समयमागठा।

“और वे जूंगीरीमठ की ओर से आके दूरिका की ओर को जाते थे उनका नाम पुराणनन्द सरस्वती था। उनसे उस वेदान्ति के द्वारा कहलाया कि किसी प्रकार का अपगुण इनमें नहीं है, इनके आप संन्यास दे दीजिये, संन्यास लेने का इनका प्रयोजन यही है कि निर्विघ्न विद्या का अध्ययन कर सकें। तब उन्होंने ने कहा कि किसी गुणशती स्वामी से कहो क्योंकि हम तो “माराष्ट्र” हैं। तब उनसे कहा कि दीक्षणी स्वामी गौड़ों को भी संन्यास दे देते हैं यह ब्रह्मचारी तो पंच दीविड है, इसमें क्या चिन्ता है। तब उन्होंने ने मान लिया और उसी ठिकाने से दो दिन संन्यास संन्यास की दीक्षा दी तथा कठमूल ग्रहण कराया और दयानन्द सरस्वती नाम रखवा।

“विद्वान् रावलजी उस समय उस मन्दिर का मुख्य महन्त था और मैं उसके साथ कई दिन तक रहा। हम दोनों का परस्पर वैदों और दर्शनों पर बड़ा विवाद रहा। जब उनसे मैं ने पूछा कि इस परिस्थिति में कोई विद्वान् और सच्चा योगी नीला नहीं है या नहीं, तो उसने यह बताने में बड़ा शोक प्रकट किया कि इस समय इस परिस्थिति में कोई ऐसा योगी नहीं है।

“उससे चलकर मैं काशी पुर गया। वहाँ से चलकर दोरा सागर जा पहुँचा। वहाँ मैंने आर

शस्त्र मृत्यु कटा, हिमालय पर्वत पर पहुँचकर देह त्याग करना चाहिये, ऐसी इच्छा हुई। परन्तु मन में यह विचार आ गया कि ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् देह छोड़ना चाहिये। अतः वस्त्र वहाँ से मुरादाबाद होता हुआ सम्मल आ पहुँचा। वहाँ से गढ़ मुक्तेश्वर से होते हुये पुनः मैं गंगा तट पर आनिकला। उस समय अन्य धार्मिक पुस्तकों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुस्तकें भी थीं। शिव संहिता, हठ योग प्रदीपिका, योग-वैजयन्त तथा घेरण्ड संहिता। मैं इन्हीं पुस्तकों को प्रायः मैं इन्हीं पुस्तकों को यात्रा में पढ़ा करता था। इनमें से कई पुस्तकों का विषय नाड़ी चालन तथा नाड़ी श्रृङ्खला।

“अतः मुझे विचार हुआ कि न जाने ये सत्य भी है या नहीं, ऐसा सन्देह होता ही गया, यद्यपि मैं अपने संशय मिटाने का यत्न करता रहा, परन्तु यह सन्देह दूर न हुये और नहीं उनके दूर करने का कोई अवसर प्राप्त हुआ।

“एक दिन देव संयोग से एक शव मुझे नदी में बहता हुआ मिला। तब समुचित अवसर प्राप्त हुआ कि मैं उसकी परीक्षा करता और अपने मन में उन पुस्तकों के सम्बन्ध में जो विचार उत्पन्न हो चुके थे उनका निर्णय करता।

“तो उन पुस्तकों को जो मैंने पास रखीं, समीप ही रख और रत्न वस्त्रों को ऊपर उस मैं नदी के

Date

सत्याथि-विवेचन

3-Notes

गोबर गया और शीघ्र वहीं जा श्राव को पकड़ तट पर ले आया। मैं ने तीव्रता चाकू से जैसा हो सका उसे काटना प्रारम्भ किया और उसमें से हृदय को निकाल लिया और ध्यान पूर्वक परीक्षा की। जब पुस्तक को छिद्रित कराने की उ ससे तुलना करने लगा। मैं से फिर और ग्रीवा के अङ्गों को काट कर सामने रखवा। यह निश्चय करके कि दोनों परस्पर अधीन पुस्तक और शव लगभग मात्र भी परस्पर नहीं मिलते, मैं ने पुस्तकों को फाड़ कर उनके टुकड़े कर डाले और शव को फेंक साँप ही पुस्तकों के टुकड़ों को भी नदी में फेंक दिया। उसी समय से शनि-शनि मैं यह परिणाम निकालता गया कि, वे ही, जिनके पात तुल और सांख्य शास्त्र के अतिरिक्त अन्य समस्त पुस्तकों जो विज्ञान और योग विद्या पर लिखी गई मिथ्या और अशुद्ध हैं।

[स्वामी दयानन्द आरस्वती द्वारा इस्तेमाल शिव जीवन संज्ञा से १।

“यह निश्चय करके मैं मधुर आया। वही मुझे एक घनीमा संन्यासी गुरु मिले। उनका नाम स्वामी विश्वानन्द था, वे पहले अलवर में रहते थे, इस समय उनकी अवस्था चरवर्ष की हो चुकी थी। उन्हें अभी तक वेद शास्त्र आदि आर्य ग्रन्थों में बहुत रुचि थी। उनसे मैंने ये महात्मा दोनों आर्य संन्यासे थे।

Date

सत्याथि-विवेचन

Notes

“सब आर्य ग्रन्थों के वे वेद भक्त थे। उनसे मैंने होने पर उन्होंने ने कहा कि तीन वर्ष में व्याकशा आजाता है, मैं ने उनके पढ़ने का पक्का निश्चय कर लिया।

“विद्या समाप्त होने पर मैं आगरा में दो वर्ष तक रहा परन्तु पत्र व्यवहार के द्वारा या कभी कभी स्वयं गुरु की सेवा में उपस्थित होकर अपने अनेक सन्देह निवृत्त कर लेता था।

“वहाँ से फिर मैं जयपुर श्वर को गया, वहाँ हरिश्चन्द्र नामी एक बड़े विद्वान् पण्डित थे। वहाँ पहले मैं ने वैष्णव मत का खण्डन करके शैव मत का स्थापन किया। जयपुर के महाराज रामसिंह भी शैव मत की दीक्षाले चुके थे। शैव मत के फैलने पर रुद्राक्ष की हजारे मालाएँ मैं ने अपने हाथों से लोगों को पहनाई।

[पूना प्रवचन १९ से संकलित १।

“इस हठ योग का विधान वरान किया जाना है। हठ योग में “वीर्य” उसे कहते हैं कि गुदा के रास्ते से पानी चढ़ा कर सफाई करना। टकट को लगा कर इस तरह देखने को कि जिसमें पलक न भिपके “वाटक” कहते हैं। मलमल का नासिका में सूँघ डाल कर मुख से निकालने से “कोनीति” कहते हैं। मलमल का चार अङ्गुल चौड़ा १६ से अस्सी हाथ तक लम्बा कपड़ा मुख के रास्ते पेट में डाल कर फिर बाहर निकालने को “घोती” कहते हैं। यह वाजपेय का

खेल है। इनसे कब निवृत्ति पाकर, योग प्राप्त कर सकते होंगे? यह हठ वले ही ज्ञाते। इनका मैं से बीमारियाँ पैदा होती हैं।

“स्थिर सुखमात्मनम्” यह आत्मन का लक्षणा कहा है। आत्मन वही है कि जिसमें सुख से बैठकर ईश्वर से योग हो सके, तो फिर नेव लोगों का यह कहना कि चौरासी आत्मनों वाला “मानमती” का तमाशा ठीक है, कैसे मान लिया जावे।

“यत्न-प्रश्नाद्यम्” इसी तरह प्राणायाम के विषय में तमाशा बन रहा है। प्राणायाम जकी यथाधि प्रवासा प्रथम ही वर्शन कर चुके हैं, नासिका और मुख बन्द कर प्राणों की रुकावट करने से कुम्भक होता है तो जो फाँसी पर चढ़ते हैं उन्हें को कुम्भक का ठीक समझना चाहिए यथाधि स्वरूप कुम्भक का यह है कि बाहर की वायु बाहर श्वक श्ववना। बाहर निकालने में विशेष उपाय करने से श्वक होता है। भीतर के भीतर प्रणों को रोकने से पूरक होता है। यह प्राणायाम का विधान है।

“यत्न प्राणायाम का विचार किया जाता है। प्राण अर्थात् श्वास और आयाम अर्थात् लम्बाई-तात्पर्य श्वास की लम्बाई को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम का प्रयोजन है कि बहुत देर तक श्वास रोक जावे। बहुत समय तक प्राणायाम करने से चित्त शुद्ध हो जाता है।

प्राणायाम का मुख्य काम यह है कि यदि यथा-शास्त्र के अनुकूल श्वास बाहर छोड़े तो शरीर की “नीरोगता” की उन्नति होती है।

“ईश्वर में लौ लगाने को प्रत्याहार कहते हैं।” मुख्य-मुख्य स्थानों में चित्त को स्थिर करने का नाम धारणा है। “आत्मा, मन और इंद्रियों को किसी वस्तु में लगाकर उस वस्तु पर मनन करने का नाम ध्यान है।” ईश्वर में लय होने का नाम समाधि है। “जब धारणा ध्यान और समाधि तीनों स्क्त्र हों तो उसे “संयम” कहते हैं।

[पूना प्रवचन १२ से संकलित]।

“श्रीगोपनीतिध्यानम्” [संस्कृत दर्शन, ३३०]।

“ध्यानं निर्विषयं मनः” [संस्कृत दर्शन, ६१२]।

“तत्र प्रत्येकतानताध्यानम्” [योग दर्शन, ३१२]।

[पूना प्रवचन ७ से संकलित]।

“आदि सृष्टि में बहुत से मनुष्य पशु मछी और पक्षी उत्पन्न किये, “ततो मनुष्याः सजायन्त” इत्यादि “यजुः” शिष्ट है, परन्तु उन्में अब जैसा, ज्ञान के कारण और कृति के कारण भेद न था। उन सबों को केवल श्वास-विहार और श्वास केवल आहार-विहार और श्वास इतना ही विदित था और इन विषयों में भी सभी सब प्राणी एक ही से और एक रस थे। सब शरीर सब जीवों के भाग के लिये हैं अर्थात् एक ही जीव के लिये नहीं है, ये सब जीव जन्तु

परमेश्वर से उत्पन्न हुआ।

सन्मूलाः सोम्येमाः प्रजाः सदायतनाः संप्रतिष्ठाः
तथाक्षरात्मोम्येमाः प्रजा प्रजायन्ते इत्यादि ॥

॥ इन्द्रोऽथो वनिबद्धः हाचकः ॥

जैसे छोटे बच्चों को सब भी यहाँ पर स्थित रहते
हुए और उसी तरह यागे मरने पर किसी प्रकार
का कण्ड नहीं होना मिलता, उसी तरह सृष्टि के
आदि में सब मनुष्य बाल्यावस्था में थे उनकी बुद्धि
अविद्या प्रतीतिबद्ध चेष्टायी अर्थात् उन्हें ज्ञास्य
ता प्रतीतिबद्ध नहीं था न हीं लमाये थे, नेत्रों से
अपना काम करें अर्थात् रूप को देखें, श्रोत्रों से
अपना काम करें अर्थात् शब्द सुनें, पाँव से
अपना काम करें अर्थात् इधर उधर फिरे, वस
इससे बिबेक और विशेष व्यापार सृष्टि के आदि
में नहीं था। ऐसी व्यवस्था सृष्टि के आदि में पाँच
वर्ष तक चलती रही फिर परमात्माने मनुष्यों को
वेद ज्ञान दिया।

[पूना प्रवचनद्वय से संकलित]।

“जिस प्रकार वह समस्त सृष्टि का निमित्त
कारण है, उसी प्रकार उसकी विद्या भी समस्त
सब मनुष्यों की विद्या का कारण है। यदि वह
बुद्धियों को शिक्षा न देता तो सृष्टि निरवस्था
अनुकूल वह जो विद्या की पुस्तक है, इनका क्रम
ही न चलता।”

“ब्रह्म व्यापक होने के कारण चोरी को
पृथक् पृथक् और क्रमशः पढ़ाता गया क्यों कि वह
चोरी परिमित बुद्धि वाले होने के कारण एक ही
समय में कई विद्याओं को नहीं सीख सकता था।
और प्रत्येक की बुद्धि की विद्या प्राप्ति की शक्ति
भिन्न भिन्न होने के कारण कभी चोरी एक समय
में और कभी पृथक् पृथक् सम्भक्त कर एक साथ
पढ़ते रहे। जिस प्रकार चोरी वेद पृथक् पृथक् है
उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को एक-एक वेद पढ़ाया।”

“जितना समय उनकी बुद्धि की दृढ़ता के
लिये आवश्यक था।”

[दिनाङ्क १३ सितम्बर १८८२ ईस्वी, बुधवार भाद्र
पुष्य प्रतीपदा सम्बत् १८३८ ईस्वी विक्रमों को उदयपुर
में हुये शास्त्रादि से संकलित]।

“इन कपट और कृतघ्न तो उसको कहते हैं कि
हृदय में तो और बात बाहर और बात, कृतघ्नता नाम
कोई उपकार करे, उस उपकार को न मानना कृतघ्नता
कहाता है।” [सू. प्र. प्र. सं. सू. ३]।

“मूलीन्द्रव से लेके घेय से अपान वायु को नाभि
में ले आना, नाभि से अपान को समान को हृदय में
ले आना, हृदय में दोनों वे और तीसरा प्राण इन
तीनों को बल से नासिका द्वार से बाहर आकाश
में फेंक देना अर्थात् जो कुछ वायु नासिका से
निकलता है और भीतर आता है उन सबका नाम

प्राण है, जिसका मूलोद्भूत नाम और ठहरको
ऊपर उठा ले तब तक वायु न निकाले, पीछे हृदय
में झुका करके जैसे कि अन्न बाहर फेंका जाता
है वैसे सब भीतर के वायु को बाहर फेंक दे फिर
उसको ग्रहण न करे, जितना सामर्थ्य होय
तब तक बाहर ही वायु को रोक रखे, जब
चित्त में कुछ क्लेश होय तब बाहर से वायु को
धीरे धीरे भीतर ले जाय फिर उसको वैसा ही
बाह्यकार के सम २० बार भी करेगा उसका
प्राण वायु स्थिर हो जायेगा और उसके साथ
चित्त भी स्थिर हो जायेगा और उसके साथ
चित्त भी स्थिर होगा, बुद्धि और ज्ञान बढ़ेगा,
बुद्धि इस प्रकार की तीव्र होगी कि बहुत कठिन
विषय को भी शीघ्र जान लेगी, शरीर में बल परक्रम
होगा तथा जितेन्द्रियता होगी तब शास्त्रों के बहुत
घोड़े काल में पढ़ेगा।

“परन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इनके बालकों
का यज्ञोपवीत घर में होना चाहिये पिता यथावत्
यज्ञोपवीत करे, पिता ही उनके गायत्री मंत्र का
उपदेश करे।”

[अन्यार्थ प्रकार प्रथम संस्करण, समुल्लास, ३]

“तत, यह द्वितीया का एक वचन है।

शिवितुः, षष्ठी का एक वचन है।

वरण्यम्, द्वितीया का एक वचन है।

मगः, द्वितीया का एक वचन है।

देवस्थ, षष्ठी का एक वचन है।

धीमहि, क्रिया पद है।

धियः, द्वितीया का बहुवचन है।

यः, प्रथमा का एक वचन है।

नः, षष्ठी का बहुवचन है।

प्रचोदयात्, क्रिया पद है। [अ. प्र. प्र. सं. समु. १]

“उपस्थेन्द्रिय का मर्दन और बाह्यकार
स्पर्श करने से तीर्थ की क्षीराना होगी और हस्त में
दुर्गन्ध भी होगा इससे व्यर्थ कर्म न करना चाहिये,
इतनी शिक्षा बालकों को पांच वर्ष करना चाहिये, उनके
पीछे माता और पिता अक्षर लिखने के शिक्षा करें।
देवनागराक्षर और अन्य देशों के भाषाओं को लिखने
पढ़ने का अभ्यास ठीक कर दें, स्पष्ट निश्चय पढ़ने
का अभ्यास हो जाय, इससे यह भी अवश्य शिक्षा
करनी चाहिये और भूत प्रतीति है सैसा विश्वास
बालक कभी न करे।”

[अ. प्र. प्र. सं. समु. २]

“तुप प्रीराने” प्रीरानं वृत्तिः, तपसा किसका
नाम है कि वृत्ति का और छात्र किसका नाम, जो अज्ञात
से किया जाता है, मेरे भये पितादिकों का तपसा और
आहु करता है उससे क्या आता है कि जिते भये को
अन्न और जलादिकों से वाग्वश्यक करनी चाहिये।

“गृही के ऊपर ५० कोश वायु है अधिक है।

इसके ऊपर वायु धोड़ा है।

“देव, मनुष्य, पितृ संज्ञाओं की है। देव संज्ञा दिव्य कर्म करने वालों की है, पवन वायु करने वालों की मितृ संज्ञा है, मनुष्य संज्ञा है, यद्यपि जानियों को पितृ संज्ञा है, अर्को निमन्त्रण देगा तब उनसे बात भी सुनेगा, प्रश्न भी करेगा। उससे उनके ज्ञान का लाभ होगा।”

“पितृ कर्म में स्वधा शब्द है उसका यह अर्थ है कि “स्वन्धधातीति स्वधा” अपने जनों को जानादिकों से धारणा करे उसका नाम स्वधा।”

“दारिद्र्य होवे तो भी दान देने की इच्छा न छोड़नी चाहिये।”

“दान अथवा सुपात्रों को देना चाहिये कुपात्रों को कभी नहीं।”

परन्तु उस यज्ञोपवीत को दहिने हाथ के अंगुली में

“जैसे वाम स्कन्ध के ऊपर यज्ञोपवीत सदा रहता है परन्तु उस यज्ञोपवीत को दहिने हाथ के अंगुली में लगाए इस क्रिया के करने से द्विजों का नाम उपवीत होता है।”

“कण्ठ में जब यज्ञोपवीत रक्खे और वाम अंगुली में यज्ञोपवीत होने का हाथ के अंगुली में यज्ञोपवीत को लगाने से द्विजों की निर्वीति संज्ञा

होती है।

दक्षिणा स्कन्ध यज्ञोपवीत रक्खे और वाम अंगुली में यज्ञोपवीत लगाने से द्विजों का नाम प्राचीन होती है।

“वसु जो है सोई पिता है, जो रुद्र है सोई पितामह है, जो सावित्र है सोई प्रपितामह है।”

“मनुष्यों के विषयों में जो कामात्मता नाम अत्यन्त कामना है सो अथैष नहीं और अकामता नाम कोई पदार्थ की इच्छा भी न करनी वह भी अथैष नहीं क्योंकि विद्या की का जो होना सो इच्छा ही सही, धर्म विद्या और परमेश्वर को कामना अवश्य हो करनी चाहिये।”

“आर्थावर्त देना की उन्नति तभी होती जब विद्या का यथावत् प्रचार होगा और जब तक उक्त प्रचार में प्रवृत्त न होंगे तब तक सुख के दिन कभी न आवेंगे।”

“वे क्षीत्र्यादिक जब तक न पैदो तब तक आर्या वर्त देना वासियों के मिथ्याचार और पारवर्षों का नाश न होगा।”

“जिसे मत है वे सब मूर्खों ही के कल्पित हैं और बुद्धिमानों का स्कही मत है अर्थात् सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना है।”

“जिसमें काम क्रोध लोभ मोह भय शोक दिक दोषों का लेश कभी न होय विद्यादिक गुरा सब जिसमें होय, वर किसी से न होय और सब जीवों के ऊपर कृपा करे, अपने हृदय में

सत्य सत्य जानने से जैसा सुख मया वैसा ही सब जीवों को सत्य सत्य उपदेश जानने, सुख प्राप्त करने की इच्छा से जो प्रीति हो के उपदेश को आपति उसका नाम है कि जैसा पक्षि है उसका वैसी वैसा ही ज्ञान का होना, उस आपति से उक्त होय नाम, सब काम जिसके पूर्ण होय, हल कपट और लोभ से जो कभी प्रवृत्त न होय, किन्तु एक परमेश्वर की आज्ञा जो धर्म और सब जीवों के कथारा के उपदेश की इच्छा जिसको होय उसे आपति कहते हैं।

“लेख नाम निन्दित नहीं किन्तु” “लेख अव्यक्त शब्द” इस धातु से लेख शब्द सिद्ध होता है इसका अर्थ यह है कि जिन पुरुषों के उच्चारण में तर्कों का स्पष्ट उच्चारण नहीं होता उनका नाम लेख है, सब देशों में और सब मनुष्यों में आपति होना सम्भव है असम्भव नहीं अर्थात् अविश्वस्य और लेख इनमें आपत अवश्य होते हैं, क्योंकि जो किन्ही मनुष्यों में उक्त लक्षणा वाला मनुष्य होगा, उसीका नाम आपति होगा। यह नियम नहीं है कि इस देश में होय अन्य देश में नहीं।

“यह शब्द प्रमाणा दो प्रकार का होता है, सू-
“लघुघोहृष्टाऽदृष्टादृष्टत्वात्। जिस शब्द का प्रसंग होता है अर्थ प्रत्यक्ष देख पड़ता है सो दृष्ट शब्द है और जिस शब्द का प्रसंग तो

प्रत्यक्ष होता है और उसका अर्थ प्रत्यक्ष देखने में नहीं आता वह अदृष्ट शब्द है।

“पूर्व मीमांसा दर्शन और वैजयिक दर्शन में प्रत्यक्ष और अनुमान दो प्रमाणा माने हैं तथा योमा शास्त्र और संख्य शास्त्र ने प्रत्यक्ष अनुमान और शब्द तीन प्रमाणा माने हैं, वेदान्त शास्त्र ने, प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि ये छः प्रमाणा माने हैं।”

“युयत् से अप्रत्यक्ष को जन्म जानना उसका नाम अनुमान है।”

“क्योंकि आपत्तों के उपदेश जो है सो शब्द है उसी में से निश्चय आया।”

“दरबन के अभाव से उसको ज्ञान हो गया, इससे अभाव भी आठवां प्रमाणा मानना चाहिए।”

[प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान (अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव) शब्द (ऐतिह्य)]।

“चार ही प्रमाणा मानना ठीक है यह गीतम गुण का अभिप्राय है।”

“इसे सब सद्गुण लोगों को अविश्वस्य लोगों को जो शीति है, उसी में चलना चाहिए। जाली लोगों की शीति में कमी नहीं।”

“संशयोपासन से लेकर अविश्वस्य पर्यन्त कर्म-काण्ड है।”

“चित्त वृत्ति के निरोध से लेकर कैवल्य पर्यन्त

"जो कि निष्काम कर्म से लेकर परमेश्वर की प्राप्ति पर्यन्त ज्ञान काण्ड है निष्काम कर्म यह है कि परमेश्वर की प्राप्ति जो मोक्ष उसके बिना भिन्न फल कर्मों से नहीं चाहना सो निष्काम कर्म कहलाता है।"

उपासना काण्ड है।"

"जो कि निष्काम कर्म से लेकर परमेश्वर की प्राप्ति पर्यन्त ज्ञान काण्ड है कि परमेश्वर की प्राप्ति जो मोक्ष उसके बिना भिन्न फल कर्मों से नहीं चाहना सो निष्काम कर्म कहलाता है।"

"दोश वेदों के पदों के आयुर्वेद के पदों जो कि ऋग्वेद का उपवेद है उसमें घन्तन्तीर कृतनिघण्टू, उरक और सुश्रुत इन तीनों ग्रन्थों को ग्राह्य किया, हस्तकिया और निदानादिक विषयों को यथावत् पदों से तीन वर्षों में प्रशस्त पढ़ लेगा।"

"यजुर्वेद का जो उपवेद धनुर्वेद उसका पद शस्त्र विद्या जो कि शस्त्रों की रचना और शस्त्रों का चलाना और अस्त्र विद्या जो कि आग्नेयास्त्रादिक पदों गुणों से होते हैं उनको यथावत् ज्ञान लेना।"

"और बृहत् समय में बृहत् स्वप्न की रचना यथावत् जान लेना।"

"सामवेद का जो उपवेद गान्धर्व वेद

उसको पद उसमें वादित्य राग शोभाशी, काल ताल स्वर पूर्वक गान विद्या का अभ्यास करे।"

"अथर्व वेद का जो उपवेद अथर्व वेद नाम शिल्प शास्त्र उसमें नाना प्रकार के कला यंत्र और नाना प्रकार के द्रव्यों को मिलाने से नाना प्रकार के व्यवहारों के यानों को और दूरवीक्षण नाम दूरस्थ पदार्थों को निकट देखे और अप्वीक्षण नाम शूल पदार्थों को भी स्थूल देखे पड़े इत्यादिक पदार्थों को रचले।"

"इसी प्रकार से पदार्थों के अनुकूल गुणों को और विरुद्ध गुणों को जानने से पृथ्वी धाम, जल धाम और आकाश धामादिक पदार्थों को रचलेगा जैसे कि महाभारत में उपरिचर वसु, राजा इन्द्रादिक देव तथा राम लङ्का से अयोध्या को आकाश मार्ग से आया, उपरिचर शक्ति राजा लोग और इन्द्रादिक देव वे भी आकाश मार्ग से जाते और प्रतीये।"

"इस प्रकार से सोढ़े सज्जिस वा अहुडि सर्व तक पढ़ लेगा, सम्पूर्ण विद्या उसको आजायगी, फिर उसको पढ़ने की आवश्यकता कुछ न रहेगी, सब विद्याओं से वह पूरी होके पुरुषों में पुरुषोत्तम हो जायगा।"

"पीछे ज्योतिष शास्त्र को पढ़े उसमें भविष्य विद्या यथावत् जाने, उससे बहुत सा उपकार होता है।"

"जितनी कन्या लोग हैं वे भी पूर्वोक्त व्याख्या

धर्मशास्त्र, वैद्यक शास्त्र, गानविद्या और
शिल्प शास्त्र, इन पांच शास्त्रों को लोच्यवश्य
पढ़ें और जो अधिक पढ़ें तो उनका सौभाग्य
बढ़ा होगा, श्रद्धा से न्यून बुद्धिजन के कन्या
कन्या लोभ कमी न करें।

हम अपरिपक्व वीर्य और अत्यन्त वीर्य
“लितनैविद्य रूप व्यवहार हैं उनके
जब तक मनुष्य नहीं छोड़ता तब तक उसको
विद्या कमी नहीं होती।”

“प्रथम विद्यु बाल्यावस्था में विवाह का
करना सोई बड़ा विघ्न है क्योंकि शीघ्र विवाह
करने से विषयी होगा और विषय ही की चिन्ता
करेगा।”

“हम अपरिपक्व वीर्य और अत्यन्त वीर्य के
नाश से बुद्धि बल पराक्रम तेज और दैत्य का
नाश हो जाता है आलस्य रोग क्रोध और
दुर्बुद्धि इत्यादि ये सब दोष उसमें हो जावेंगे
किर कैसे उसको विद्या हो सकती है, कमी न
होगी।”

“दूसरा विद्या का नाशक विघ्न पाषाणा-
दिक मूर्ति पूजन, ऊर्ध्व पुंड्र, विपुलादिक
त्रिपुंड्रादिक तिलक, रुक्ताक्षी, त्रयोदश्यादिक
व्रत, काश्यादिक तीर्थों में विश्वास, रामकृष्ण
नाशयश, शिव, भगवती और गौरी आदिक नामों से

पाप नाश का विश्वास यह भी परमेश्वर की कृपा का
बड़ा मारी विघ्न है।”

“क्योंकि विद्या का फल यही है कि परमेश्वर की
आज्ञा पालन करना जो कि धर्म रूप है, परमेश्वर को
यथावत् जनक जानना, मुक्ति का होना, यथावत्
व्यवहार और परमार्थ का धर्म से अनुष्ठान करना यही
विद्या का फल है।”

“तीसरा विघ्न यह है कि माता पिता और आचार्य-
दिक पुत्र और कन्याओं को लाड़ने में ही रखते हैं,
कुछ शिक्षाव ताड़न नहीं करते, इससे भी विद्या का
नाश हो जाता है।”

“चौथा विघ्न यह है कि गुरु पीठित और
पुरोहित वे तीनों विद्या तो पढ़ते नहीं, फिर वे
हृदय से यही चाहते हैं कि मेरे बेटे और बरेख-
मान भूख हो बने रहें क्योंकि वे जो पीठित हो जायें
तो हम लोगों का पारवण्ड उनके सामने न
चलेगा। इससे हम लोगों की आजीविका नष्ट हो
जायगी इसीलिए वे सदा पढ़ने पढ़ने में विघ्न ही
करते हैं।”

“धनादरा और राजा लेमा भी आलस्य और
विषय सेवा में फंस जाते हैं इससे वे भी पढ़ना
नहीं चाहते। धनादरा वा राजपुत्र पढ़ना भी चाहें
तो वैरागी आदि सम्प्रदायी और पीठित लोग
बल और कपट रखते हैं यथावत् पढ़ाते नहीं।

यहाँ तक वे हल और विद्यु करत हैं कि कला और पुत्रता वन्द्य पुत्र भी विद्यावान् न हो जाय क्योंकि उनके प्रतिष्ठा होने से मेरी प्रतिष्ठा नष्ट हो जायगी। इससे जो कुछ जानते भी हैं उसको क्षिप्त करते हैं। इसलिये विद्या कालेय आर्यवर्त के नाम से हो गया है।

“पाँचवा विद्यु यह है कि मङ्ग पीने, अफीम और मद्य पान करने से बहुत सा प्रमाद होता है, और बुद्धि भी नष्ट हो जाती है उसे भी विद्याका नाश होता है।”

“छठवा विद्यु यह है कि राजा और धनाह्व लोंगों द्वारा घाट मन्दिर व क्षेत्रों में स्थावत कितह अथो दशाह, व्यर्थ स्थानों और लोगों के रचने में बहुत धन नष्ट हो जाता है किन्तु ग्रहस्थ लोग जितना निर्बाह मात्र आवश्यक हो उम्माही स्थान रखें, विद्या प्रचार में किसी का धन नहीं जाता और विचार के न होने से गुरावान् लोगों की प्रतिष्ठा भी नहीं होती किन्तु पारवर्णियों की होती है, उसे मनुष्यों का उल्साह मङ्ग हो जाता है।”

“सप्तम विद्यु यह है कि पाँचवे वर्ष के पुत्रों व कन्याओं की पाठशाला में पढ़ने के लिये नहीं भेजते, उनके ऊपर राजा का दण्ड न होने से भी विद्या का नाश होता है।”

“और विषय सेवन में अत्यन्त फँस जाते

हैं इससे भी विद्या का नाश होता है यह आठवा विद्यु विद्या का नाशक है इसादिक और भी विद्या का नाश करने के विद्यु बहुत हैं।”

“जब सोलह वर्ष का पुरुष होय तब से लेके जब तक वृद्धावस्था न आवे तब तक व्यायाम करे, बहुत न करे किन्तु ४० बैठक करे और २० वा ४० बण्ड करे, कुछ भी न रखे वा पुरुष के सेवल करे फिर लोट करे, उसके मोजन से एक घण्टे पहिले करे परन्तु दूध जो पीना होय तो अभ्यास के पीछे शीघ्र ही पीवे इससे अरि में रोग न होगा जो कुछ खाया वा पीया सो सब परिपक्व हो जायमा सब धानु-यों की वृद्ध होती है तथा दीर्घ्य की भी अत्यन्त वृद्धि होती है।”

“ओत्रियं ब्रह्मन् होयती” यह अष्टाध्यायी का सूत्र है, व्याकशा पठने से लेके वेद पठन तक जिसका पूर्ण पठन हो गया है उसके ओत्रिय कहते हैं। [स.प्र., प्र. सं., समु. ३।]

“जब तक ब्रह्मचर्य की वृत्ति और विवाह का समय न होय तब तक उन बालकों की माता पितादिक सर्वथा रक्षा करें।” [स.प्र., प्र. सं., समु. ३।]

अंगुष्ठ के मूल के नीचे तल नाम हथेली का जो मध्य है उसका नाम ब्राह्म तीर्थ है, कनिष्क के मूल में रखवा है उसका नाम प्राजापत्य तीर्थ है, अंगुलियों का जो अग्रभाग है उसका नाम देव तीर्थ

Date

सत्याचि विवेचन

Notes

है, तब नीचे और अंगुल दूनों के मूल जो बीच है उसका नाम पितृ तीर्थ है, आचमन समर्थ में ब्राह्मतीर्थ से आचमन करे।

“एक चतुष्कोश मिट्टी की बतल की वीदे खले ऊपर चौड़ी नीचे छोटी ऊपर चौड़ी नीचे छोटी ऊपर तो बारह अंगुल नीचे चार अंगुल रहे।”

“जो पड़े होय तो कुशाम्ब से निकाल देवे। ऐसे ही संध्योपासन के पीछे नित्य देवद्वार अग्नि होव सब करे।”

“चार प्रकार के पदार्थ होम के निर्वह हैं, एक सुगन्धगुरा जिसमें होय जैसे कि कर्कश के शरादिक, दूसरा मिष्ठगुरा जिसमें मिष्ठगुरा होय जैसे कि मिठो शर्करादिक, तीसरा जिसमें घृष्ट कारक गुरा होय जैसा कि दुध ची।”

“और चौथा जिसमें रोगनिवृत्तिकारक गुरा होय जैसा कि वैद्यक शास्त्र की शक्ति से सोमलतादिक औषधियां निरवी हैं।”

“१६ वर्ष से न्यून कन्या का विवाह कभी न करना चाहिये और २५ वर्ष से न्यून पुरुषों का भी न करना चाहिये और जो कोई इस बाल व्यातिक्रम करे और १६ वर्ष से पहिले कन्याओं का विवाह करे और २५ वर्ष से पहिले पुरुषों का विवाह करे उसको राजा दण्ड दे, उनके माता पिता को भी और जो कोई अपने सन्तानों को

Date

सत्याचि विवेचन

Notes

पाठशाला में पढ़ने के लिये न भेजे उनको भी राजा दण्ड देवे।

“सुक्ति पूर्वक विद्या बल से ही वीर्य की रक्षा करनी चाहिये अन्यथा वीर्य की रक्षा कभी न होगी विद्या भी न होगी, जब विद्या न होगी तब कुछ भी सुरव न होगा, उसका मनुष्य शरीर धारण करेगा भी पशुवत हो जायगा। [स. प्र. प्र. सं. अनु. ३१।

“पुरुषों और कन्याओं का ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या जब पूरी हो जाय तब जो देश का राजा होय और अन्य जितने विद्वान लोग वे सब उनकी उनकी यथावत् परीक्षा करे, जिस पुरुष व कन्या में वैष्ट गुरा जितनी द्रव्यता, सत्यवचन, निरभिमानता, उत्तम बुद्धि, पूर्ण विद्या, मधुरवाणी, कृत्स्न कुतज्ञता, विद्या और गुरा के प्रकार में अन्यन्त प्रीति, होय जिसमें काम क्रोध, लोभ मोह भय शोक कुतज्ञता, कपट, ईर्ष्या, दुष्ठादिक दोष न होव, पूर्ण कृपा से सब लोगों का कल्याण चाहै, उसको ब्राह्मण का अधिकार देवे।”

“और यथोक्त पूर्वोक्त गुरा जिसमें होय परन्तु विद्या कुछ न्यून होय, बुरा वीरता, बल पराक्रम और पराक्रम वाला, जो ब्राह्मण भया उससे अधिक हंस्य हो उसको क्षीत्रिय करे।”

“जिसको थोड़ी विद्या सी विद्या होव परन्तु व्यापक शक्त व्यवहारों में नाना प्रकारों

पुकार के शिल्पा ने देश देशान्तर से पदाधी
को ले आने और ले जाने में कतुर होवे और पूर्वोक्त
जितेन्द्रियतादिक गुण भी होवे परन्तु अत्यन्त
भीरु भी होवे उसको वैश्य करना चाहिये।

“ जो पढ़ने लगा, जिसको शिक्षा भई भी
भई परन्तु कुछ भी विद्या नहीं आई उसको ब्राह्म
बनाना चाहिये। इसी प्रकार से कन्याओं को भी
व्यवस्था करनी चाहिये। ”

“ विवाह में बहुत धन का नाश करना,
अनुचित है ही है क्योंकि यह अनव्यय हो
जाता है, इससे बहुत राज्य नष्ट हो गये और
वैश्य लोगों का भी विवाह में धन के व्यय से
हिवाला निकल जाता है, सब लोगों का धन का
मिथ्या व्यय करना अनुचित है, इससे विवाह में
में धन का नाश कभी न करना चाहिये। ”

“ स्त्री के शरीर से पुरुष का इशिर लम्बा होना
चाहिये, हाथ के कन्ध तक स्त्री का शिर आवे, इससे
अधिक स्त्री का शरीर न होना चाहिये न्यून होय तो
होय अन्ध या गर्भ स्थिर न रहेगा और वंश च्छेद
भी हो जाय तो आश्चर्य नहीं। ”

“ राजस्वला स्त्री के साथ ४ दिन तक सङ्ग
करने का निषेध है। ”

“ एक व्यक्ति तीसरी स्त्री से कभी वैश्या बहुत
पुरुषों को वीर्य के नाश से निर्वन् कर देती है इससे

एक पुरुष के लिये एक स्त्री कया चाहा है अर्थात्
बहुत है, एक स्त्री के साथ भी वीर्य का सर्वथा नाश
करना उचित नहीं, क्योंकि वीर्य के नाश से पूर्वोक्त
सब दोष हो जायेंगे इससे विवाहिता के साथ भी
वीर्य का नाश बहुत न करना चाहिये केवल
सन्तानोत्पत्ति के लिये वीर्य का दान करना चाहिये
अन्यथा नहीं। ”

“ परन्तु बालकों से भी बुरा काम करते हैं, यह
बड़ा आश्चर्य है कि स्त्री का काम पुरुषों से लेते हैं
इनको तो अत्यन्त दृष्ट बुद्धि सङ्गों को जाननी चाहिये। ”

“ जब जीवात्मा बाहर व्यवहार करने को चाहता है
तब बहिर्मुख होता है, मन और इन्द्रियों को भी बहि-
र्मुख करती है और जीव भी नेत्र ललाट और श्रोत्र के
ऊपर के अङ्गों में विहार करता है जैसे कि सूर्य उदय
होकर ऊपर विहार करता है वैसे जीव भी जब
सोना चाहता है तब हृत् हृदय पर्यन्त नीचे के अङ्गों
में चला जाता है, शक्ति की कोई अन्धकार हो जाता
है, बिना अपने स्वरूप के किसी पदार्थ को नहीं
देखता जैसे कि सूर्य जब अस्त हो जाता है तब
अन्धकार होने से कुछ नहीं देख पाता है, ऐसे
ही जीव के ऊपर आने और नीचे जाने का व्यवहार
उसका संधान देने का संघ्या काल में करे इसके
संधान करने से परमेश्वर पर्यन्त का कालान्तर
में मनुष्यों को बोध हो जाता है, और जीव का

Date

सत्याधि-विवेचन.

६० Notes

कभी नाश नहीं होता, इससे इसका नाम आदि व्यंज

“जो पुरुष रजस्वला स्त्री से समागम करता है उसकी बुद्धि बल तेज नेत्र और आयु ये पांच नष्ट हो जाते हैं।”

“एक प्रहर रात रहे तब सब मनुष्य उन्हें उनके प्रथम कर्म का विचार करें।”

“उठ के मल मूत्रादिक त्याग करें, हस्तपाद प्रक्षालन करें, फिर जो वृक्ष दूध वाले होते, उनसे दन्त धावन करें अथवा रेवर के कुश से चुका करके दन्त धावन से दाँतों को मेल और स्नान करें, सूर्योदय से पहिले रातों को सप्रमत्ता करें स्कान्त में जाके सन्ध्यापासन ऐसा कि लिखता है, ऐसा करे, सूर्योदय के पीछे घर में आके जो जालिश वशा का व्यवहार पूर्वक लिखी है वैसा करे, जब तक प्रहर दिन न चड़े, तब तक दूसेरे प्रहर के प्रारम्भ में तर्पण बलि वैश्वदेव अतीथि सेवा करके भोजन करें।”

“तब चार या पांच घड़ी दिन रहे तब सब कार्यों को छोड़ के भोजन के लिये जावे पहिले शौच स्नानादिक क्रिया करे तदनन्तर वैश्वदेव देव फिर अतीथि सेवा करके भोजन करे, भोजन करके फिर भी सन्ध्यापासन के लिये स्कान्त में चला जाय, सन्ध्यापासन करके फिर अपने अग्नि स्थान में जाके अग्नि होत्र करे, जब जब अग्नि होत्र

Date

सत्याधि-विवेचन

Notes

करे तब तब स्त्री के सङ्ग हो करे।

“निश्चय एक प्रहर रात तक व्यवहार करे फिर सोवे, दो प्रहर अथवा डेढ़ प्रहर तक, फिर ठठके वैसे ही नित्य क्रिया करे, सोमध्य रात्रि के मध्य दो प्रहर में जब जब वीर्य दान करें उसके पीछे कुछ ठहर करके दोनों स्नान करें पीछे अपनी शय्या में पुष्पक पुष्पक जाके सोवें, जो स्नानमन्त्र करें तो उनके शरीर में राग हो जावेगे क्योंकि उससे बड़ी उष्मात होती है इसलिये स्नान करने से वह विकार न होगा, वीर्य और तेज बढेगा।”

“मनु भगवान का वसन प्रमत्ता है भोजन है गृह स्थानां सायं प्रातर्विधीयते स्नानं मैथुनी स्मृतम्। इसका अर्थ यह है कि दोबेर गृह स्थलों में भोजन करना चाहिये, सायं और प्रातः काल जो मैथुन करे तो पीछे स्नान अवश्य करे।”

“दो घड़ी रात से लेकर सूर्योदय पर्यन्त प्रातः सन्ध्या के काल का नियम है तथा एक अर्ध घड़ी दिन से लेकर जब तक तारा न निकलें तब तक सायं सन्ध्या काल का नियम है।”

“जो प्रातः और सायंकाल संध्या नहीं करता उसके श्रेष्ठ द्विज लोग सब द्विज कर्माधिकारों से निकाल दैव अर्थात् धर्मोपवीत को तोड़ के शूद्र कुल में कर देवें, वह केवल सेवा ही करे जो शूद्र का कर्म है।”

“कर्म से उपासना और उपासना से ज्ञान प्रवृत्ति है।
ऐसी बुद्धि सदा रहती।”

“सुजायों लोभों के मनुष्यों ने राजाओं और धनादियों की मति भ्रष्ट कर दी है जो बुद्धिमान राजा और धनादय लोभ हैं इस प्रकार के मनुष्यों को पास भी नहीं बैठने देते।”

“द्विज कुल में दो बार विवाह का होना उचित नहीं।”

“सब मनुष्यों के बीच में स्त्री और पुरुष को जो मूर्ख होय उनका यज्ञोपवीत भी हट्टा होय तो उसको तोड़ के शूद्र कुल में कर देना।”

“जब कोई विधवा होय तब हूँ पीढ़ी अथवा गोत्र और जाति में देवर अथवा ज्येष्ठ जो सम्बन्ध से होय उससे विधवा का परिग्रह होना चाहिये परन्तु स्त्री की इच्छा से, जब स्त्री का पति मर जावे और मरने का शोक भी निकुत हो जावे।”

“जो स्त्री अक्षत यौनि अर्थात् विवाह तथा जौने आने मात्र व्यवहार तो हुआ हो परन्तु पुरुष से समागम न हुआ होय तो पौनर्भव पुरुष अर्थात् विधवा के नियोग से जो उत्पन्न भया होय उसके साथ उस विधवा का विवाह होना उचित है।”

“एक वह भी व्यवहार है इसका भी जानना चाहिये कि अपने शरीर से पुत्र न होय अर्थात् ऐसा से वीर्य होन हो गया होय अथवा पीढ़े न पुंसक

हो गया होय तो अपने स्वजाति के पुरुष से वीर्य लेके पुत्रोत्पत्ति कर लेवे परन्तु धर्म से व्यभिचार से नहीं।”

“ओरिखों को अत्यन्त बन्धन में रखते हैं यह भी बड़ा भ्रष्ट काम है क्योंकि इससे स्त्रियों को बड़ा दुःख होता है, ज्येष्ठ पुरुषों का तो दर्शन भी नहीं होता और नीच पुरुषों से भ्रष्ट हो जाती हैं, देखना चाहिये कि परमेश्वर ने तो सब जीवों को स्वतंत्र रचा है और उनको मनुष्य लोग बिना अपशय से बन्धन में रख देते हैं, वे बड़ा पाप कर्म करते हैं सो इस बात को समझन लोग कभी न करें, यह बात मुसलमानों के राज्य से प्रकृत भई है, जोगी नहीं, कौन्ती, गान्धारी और द्रौपदी द्रौपद्यादिक स्त्रियाँ राज्य सभा में, जहाँ कि राजा लोगों की सभा होती थी, वार्ता और संभाषण करती थीं, मारीच्यौ मैत्रेयी आदिक अरुण लोगों की स्त्रियाँ भी सभा में शास्त्रार्थ करती थीं यह बात महाभाष्य और बृहदारण्यक उपनिषद् में लिखी है इसको अवश्य करना चाहिये, मुसलमान लोगों का जब राज्यभया था तब किसी की कन्या वा स्त्री को मुसलमान पकड़ लेते वा भ्रष्ट कर देते थीं ये, उसी दिन से ज्येष्ठ आर्यावर्त देशवासि लोग स्त्रियों को घर में रखने लगे, सो इस बात को छोड़ ही देना चाहिये क्योंकि इस व्यवहार में मित्राद्य दुःख के सुख कुछ नहीं, जैसे दक्षिणात्य लोगों की स्त्रियाँ तट्टा धारणा

Date

सत्यार्थ-विवेचन

६६ Notes

करती है वैसा ही पहिले था क्योंकि कभीवस्त्र
अशुद्ध नहीं रहता, सब दिन जैसे पुरुषों के
वस्त्र शुद्ध रहते हैं, इससे इस प्रकार वस्त्र
धारणा करना ठीक नहीं है। [स.प्र. प्र. सं. समु. ७॥

“विना तप के अन्तःकरण शुद्ध नहीं होता
और इन्द्रियों का जय भी नहीं होता इससे तप
अवश्य करना चाहिये।”

“जब तप से मन और इन्द्रियाँ सब वशी-
भूत हो जाय तब आहवनीय, गृहपत्य, दीक्षणात्य
सम्य और आवसथ्य यह पांच प्रकार का अग्नि
होता है और बैतान अर्थात् इष्टियों की सामग्री
और अग्नि होव की सामग्री और उनकी बह्य
बाह्य क्रिया को छोड़ दे, क्योंकि जितनी बाह्य
क्रिया है वे मन को शुद्धि के लिये हैं, जब मन शुद्ध
हो जाय तब उनके करने का कुछ प्रयोजन नहीं
किन्तु भीतर की जो क्रिया अर्थात् योगाभ्यास
और विचार इन्हीं को करे।”

“जब संसार के व्यवहार और अग्नि हो जाय
बाह्य क्रियाओं जिनमें उपवीत, निवीति, प्राचीना-
वीति, यक्षोपवीति यज्ञोपवीत से क्रिया करनी
होती है, उन अग्नि होत्रादिक बाह्य क्रिया
क्रियाओं को तो छोड़ दिया और कहीं विद्या से
प्रतिष्ठा करने, उसको नहीं छोड़ा, यज्ञोपवीता-
दिक का रखना उसको व्यर्थ ही है इससे यह

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

प्रमाणा है। प्राजापत्यां निरूप्योऽपि तस्यो सवे-
दसं हुत्वा ब्राह्मणाः प्रव्रजेत ॥ यह यजुर्वेद के
ब्राह्मणों की धृति है, इसका यह अर्थ प्राय है
कि प्राजापत्य इष्ट को करके उसमें सर्ववेद
सर्ववेदस विदलाये, जो जो यज्ञोपवीतादिक
बाह्य चिह्न प्राप्त होये उन सभी को हुत्वा
त्यक्त्वा अर्थात् छोड़ के ब्राह्मण विद्या ज्ञानवान्
तथा वैराग्यादिक गुणा वाला “परिव्रजेत परितः
सर्वतः व्रजेत” सब संसार के बंधनों बन्धनों से
मुक्त हो के संन्यासी हो जाय।

“अशानि त्रीण्यं वाकृत्य मनो मोक्षो निवेद्येत
अनया कृत्य मोक्षं नु सेवमानो ब्रजत्यधः ॥ २३॥
तीन अशान अर्थात् अग्नि, विन और देव और रा
इनको उतार करके मोक्ष के लिये संन्यास में चित
प्रविष्ट करे और जो इन अशानों को न उतार के
मोक्ष की इच्छा करता है सो नीचे गिर पड़ता
है, उसको मोक्ष प्राप्त नहीं होता।”

“यदहरेव विरजेत तदहरेव प्राव्रजेदुना द्वा
गृहाद्वा, ११, ब्रह्मचर्यादेव प्रव्रजेत ॥ २॥ यह
यजुर्वेद के ब्राह्मणों की धृति है, इसका यह
अर्थ प्राय है कि जिस दिन पूरी वैराग्य होय
उसी दिन संन्यासी हो जाय वानप्रस्थाश्रम
अथवा गृहाश्रम से, और जब पूरी विद्या होय
पूरी वैराग्य और पूरा ज्ञान होय और विषय

मोक्ष की इच्छा कुछ भी न होय तो ब्रह्मचर्याश्रम से भी संन्यास ले ले वै तो भी कुछ दोष नहीं।

“जिस पुरुष को विद्या, ज्ञान, वैराग्य, पूर्ण जितेन्द्रियता होय और त्रिविवेक भेदा की इच्छा न होय उसी का संन्यास लेना ठीक है।

“संन्यासी परमेश्वर के सिवाय किसी पदार्थ से मोह न करे।

“कुसुम्वा “रा से रंगे वस्त्र पहिरे और गेरु वा मृत्तिका के रंगे नहीं अथवा ध्वज वस्त्र धारण करे।

“रुक बार भिक्षा करे भिक्षा में सन्तुष्ट आसक्त न होवे क्योंकि जो भोजन में आसक्त होगा सो विषयों में भी आसक्त होगा।

“जब गांव में घुम न देख पड़े, बूझ वा चक्री का शब्द न सुन पड़े, किसी के घर में अंगार न देख पड़े, सब ग्रहस्थ लोग भोजन कर चुके और भोजन करके पत्नी और सकोई बाहर को फेंक दें, उस समय संन्यासी ग्रहस्थ लोगों के घर में भिक्षा को अन्न के वास्ते नित्या जाय और जो ऐसा कहते हैं कि हम पहिले ही भिक्षा करेंगे यह उनका पारवण्ड ही जानना, क्योंकि इससे ग्रहस्थ लोगों को पीड़ा होती है।

“प्राणापानादिक प्रवृत्त विद्या

जो कोई नहीं जानता उसको संन्यास ग्रहण का फल नहीं होता, उसका संन्यास ग्रहण ही व्यर्थ है। [स. प्र. प्र. सं. समु. ५]।

“ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्यों के पुत्र दुष्ट वा कन्या मुखे हों हो जायें तब उनको शूद्र कुल में रश्च वै और शूद्रादिकों में जब द्विजत्व स्वीकार के योग्य हों तब यथा योग्य द्विज का स्वीकार दें अथवा द्विज बना दें, तब जिस ब्राह्मण क्षत्रिय वा वैश्य के पुत्र वा कन्या रुक, दो तीन वा जितने शूद्र हो जायें हों उनमें से एक पुत्र वा कन्या को राजा भिन रके दें तथा शूद्रादिकों को भी।

“वेद पठे ब्रह्मचरि वा न प्रस्थ और संन्यासी इनको साक्षी करने से पढ़ना, पढ़ाना तप और विचार में विघ्न होगा इससे इनको साक्षी न करना चाहिये।

“रसोई आदिक सेवा सब लोगों की शूद्र ही करे।

“शूद्र ही सब कर देगा और ग्वले वै पिलावेगा परन्तु सब पदार्थ और सब पात्रादिक ब्राह्मणादिकों के हों शूद्र के घर के नहीं।

[स. प्र. प्र. सं. समु. ६]।

इससे देव लोक को भाषा संस्कृत भाषा नहीं, और जब ब्रह्मादिकों को भाषा संस्कृत नहीं तो आर्यावर्त देशवालों की कैसे होगी? कभी नहीं परन्तु

Date

सत्यार्थ विवेचन

Notes

ऐसा जाना जाता है कि आर्योक्त देशों में पहले पठन पाठन की प्रवृत्ति अधिक थी। सब ऋषि मुनि और राजा लोग आर्योक्त वासी लोगों ने परम्परा से संस्कृत पढ़ा और पढ़ाया है। इससे आर्योक्त देश की मीमांसा संस्कृत नहीं, जो मुसलमान लोग इसको जिन्न भाषा कहते हैं, सो केवल ईरान से से कहते हैं, जैसे कि आर्योक्त देशवासियों का नाम ईरानियों है। इन्द्र देव दिया सो वह संस्कृत जिन्न भाषा स्वर्गदिया भी नहीं क्यों कि जिन्न तो भूत प्रेत पिशाचों ही का नाम है। भूत प्रेत पिशाच होते ही नहीं और जो लोक लोकान्तर में होते होंगे तो लोकलोकान्तर में होते होंगे, यहां नहीं, फिर उनकी भाषा यहां कैसे आ सकेगी?"

"वह देव ऋषियों की भाषा न लोगों की भाषा नहीं, क्योंकि, बृहस्पति प्रवक्ता इन्द्राद्यैर्ना वह महभाष्य का वचन है, इन्द्र ने बृहस्पति से संस्कृत पढ़ा और बृहस्पति ने ऋषिगुरु प्रजापति से, उनसे मनु से, मनु ने विश्व से, विश्व ने ब्रह्मा से, ब्रह्मा ने हिरण्यगर्भ हिरण्यगर्भी विक देवों से, उनसे ईश्वर से, जो देव लोगों की भाषा होती तो वे क्यों पढ़ते पढ़ाते क्यों कि देश भाषा तो व्यवहार से परस्पर आ जाती है।"

Date

सत्यार्थ विवेचन

Notes

"अग्नि, वायु, आदित्य और ऋषिगुरु ऋषिगुरु आदि में भेजे थे। उनसे वेद पड़े, उनसे ब्रह्मा ने पढ़े, विश्व से मनु ने, मनु से दश प्रजापतियों ने पढ़े और उनसे प्रजा में फैल गये।" "ईश्वर ने आकाशवर्षी की नाई सब शब्द, सब मन्त्र उनके स्वर, अर्थ और सम्बन्ध भी सुना दिये, इससे वेदों का नाम प्रतीत रक्खा है ईश्वर अन्तर्यामी है। उसने हृदय में वेदों का प्रकाश कर दिया फिर उन्हें नेत्रों पर प्रकाश कर दिये।"

ऐसे जैसा ज्ञान का संयोग विवेक होता है वेद वेद विद्या का संयोग विवेक का भी नहीं होता।

"वेद के पुस्तक और पठन पाठन जब तक जगत् रहेगा तब तक वेद की पुस्तक और पठन पाठन भी रहेंगे, जब जगत् नष्ट होगा उसके साथ वेद भी नष्ट होंगे परन्तु वेद नष्ट न होंगे क्यों कि वह विद्या परमेश्वर की है, जैसे परमेश्वर नित्य है वैसे उसके विद्या-दिक गुरु भी नित्य हैं।"

"वेद अपौरुषेय और पौरुषेय भी हैं क्यों कि पुरुष देह धारी जीव का नाम है और पुरी के होने से परमेश्वर का भी अपौरुषेय तो इससे है कोई देह धारी जीव को खना

Date

सत्याधि-विवेचन.

७० Notes

नहीं है और पौरुषेय इस को स्त्री कि पूरा पुरुष जो परमेश्वर उसने रचा है इसे पौरुषेय भी हैं।

“वेदेषु जगतो विस्तारो नाम विस्तृता बुद्धिर्व्यासः स वेदव्यासः ॥ व्यासजीने वेदों को पढ़ के और पढ़ाये हैं जिससे सारा सब जगत में वेद का पठन और पाठन फैल गया, और उनके बुद्धि वेदों में विशाल थी कि यथावत् शब्द अर्थ और सम्बन्ध से वेदों को जानते थे इसे इनका नाम वेद व्यास रखा गया पहिले इनका नाम कृष्ण द्वैपायन था।

“सब देश भाषाओं का मूल संस्कृत है क्योंकि संस्कृत जब बिगड़ती है तब अपभ्रंश कहती है अपभ्रंश से देश भाषा होती है।

“जो जो पाप करता है सो अपनी मूर्खता ही से करता है, वैसा ही दुःख भोगता है।

“जीव को यहाँ तक अधिकार दिया है कि प्रशामादिक सिद्धि, त्रिकाल दर्शन और आप जीव ईश्वर संयोग से अनन्त सुख को पा सकता है।

“प्राणा जिससे अध्वे चैष्टा करता है अपान जिससे अध्वे चैष्टा करता है, व्यान जिससे सब सन्धियों में चैष्टा करता है उदान जिससे जल और प्रपन्न को कण्ठ से

Date

सत्याधि-विवेचन.

७१

Notes

और भीतर आकर बेशा कर लेता है समान जिस से नाभि द्वारा सब रसों को सब शरीर में व्याप्त कर देता है, नाभ जिससे डकार लेता है, कूर्म जिससे नेत्र खोलता और मुंदता है, कृकल जिससे झोंकता है, देवदत्त जिससे जंभाई लेता है, धनञ्जय जो शरीर को पुष्ट करता है, ये पांच उपप्राणा हैं ये दश रुक ही हैं।

स्थूल देह बाहर का है और

ये पांच मुख्य प्राणा हैं, नाभ जिससे डकार लेता है कूर्म जिससे नेत्र खोलता और मुंदता है कृकल जिससे झोंकता है देवदत्त जिससे जंभाई लेता है, धनञ्जय जो शरीर को पुष्ट करता है, ये पांच उपप्राणा हैं, ये दश रुक ही हैं।

“स्थूल देह बाहर का है और जिससे गाढ़ी निद्रा होती है, सूक्ष्म रज और तमोगुण मिलके प्रकृति कहती है जिसका नाम सूक्ष्म देह परम सूक्ष्म भूत और प्रधान भी है यह कारशा शरीर कहलाता है व्यापक के होने से सो सब प्राणियों का रुक ही है, दोनों के बीच में मध्यस्थ लिंग शरीर है, रुक मात्र जीव और परमात्मा ही चेतन है तीसरा कोई नहीं सो परमेश्वर विभु व्यापक सर्वत्र रुक रस जहाँ जहाँ लिंग शरीर में विशिष्ट जीव रहता है वहाँ २ परमेश्वर हो पुरा है सो लिंग शरीर में उसका शान्तान्य प्रकाश है और विशेष प्रकाश चेतन

Date

सत्यार्थ-विवेचन.

62 Notes

जीव का ही है उसे दर्पण में सूर्य का विषय प्रकाश होता है, सो परमेश्वर का सदा संयोग रहता है, वियोग कभी नहीं इससे परमेश्वर के अन्वय होने से यह चेतन नहीं है वह जीव कहलाता है क्योंकि लिंग शरीर से युक्त जीव स्वर्ग नरक, जन्म मरणा और मरणा इत्यादि का में प्रमत्त करता है परन्तु परमेश्वर निश्चल है उसके साथ प्रमत्त नहीं करते हैं और उसके गुणों के भोग वा संगी कभी नहीं होते हैं, कारण, शरीर के ज्ञान लोभ और क्रोधादिक गुण जीव में होते हैं और स्थूल शरीर के शीतोष्ण सुधा नुषादिक गुण भी जीव में होते हैं, क्योंकि दोनों शरीरों का भी जीव संग करता है।

“जगत् में सूर्य चन्द्र पृथिव्यादिक भूत वृक्षादिक स्थावर और अनुष्णादिक चर इनका रचन कर्म लोभ दैव के तथा धारणा प्रलय दैव के आरच्य पूर्वक, ईश्वर की शक्ति को अनन्त जानते हैं।” [स.प्र. प्र.सं. समु. 67]

“साठ परमाणु मिलके एक अणु रत्ता, दो अणु से एक दूयणुक, और तीन दूयणुक से एक त्रसरेणु।

“इस पृथिवी के चारों ओर वायु अधिक है तथा वायु में अन्य तत्व भी मिले हुए देख

Date

सत्यार्थ-विवेचन.

Notes

पड़ते हैं और वह वायु ४८ वा ५० को सतक अधिक है ऊपर थोड़ा है।

“वायु के परमाणु का यह देखने में आता है नीचे के चारों ओर सम देश में गमन करने वाले परमाणु हैं। पृथिवी और जल के परमाणु प्रधारा भी हैं। अग्नि के परमाणु ऊर्ध्व गमन करने वाले हैं।”

“लिंग शरीर और स्थूल शरीर का संयोग से प्रकट का जो होना उसका नाम जन्म है और लिंग शरीर तथा स्थूल शरीर के वियोग होने से प्रकट का जो होना उसका नाम मरणा है। सो इस प्रकार से होता है कि जीव अपने संस्कारों से धूमता हुआ जल वा कोई औषधि में अथवा वायु में मिलता है फिर जैसा जिसके कर्मों का संस्कार अर्थात् सुख वा दुःख जितना जिसको अवश्य होता है परमेश्वर की आज्ञा के अनुकूल वैसे स्थान और वैसे ही शरीरों में मिलके गर्भ में प्रविष्ट होता है।

इ: विकारवाला अस्तित्व नाम शरीर है, १. नाशित नाम जन्म का होना, २. बढ़ते नाम बढ़ना ३. विपरिणामित नाम स्थूल का होना, ४. अपकीर्ण नाम क्षीण होना ५. विनश्यते नाम नष्ट होना अर्थात् मृत्यु होना, ६. विकार शरीर के हैं फिर जब मरणा होता है तब स्थूल और लिंग शरीर का वियोग होता है सो स्थूल शरीर से लिंग शरीर निकल के बाहर

का जो वायु है उसमें घिरता है फिर वायु के साथ जहाँ लहें घूमता है, कभी सूर्य की किरणों के साथ ऊँचे और चन्द्र की किरणों के साथ नीचे आ जाता है अथवा वायु के साथ नीचे ठपक और मध्य में रहता है फिर उक्त प्रकार से शरीर छाया कर लेता है।

“जैसी व्यवस्था जीने और मरने में परमेश्वर ने रखी है वैसी ही होती है जो वायु और सूर्य के आधार से सब जीवों को जाना और जाना होता है तथा वही परमेश्वर यही परमेश्वर की आज्ञा है।”

“क्योंकि परमेश्वर के रचे असंख्य लोक हैं उनमें से जिन लोकों में सुख अधिक है और दुःख थोड़ा है उनको स्वर्ग कहते हैं तथा जिन लोकों में दुःख अधिक और सुख थोड़ा है उनको नरक कहते हैं जिन लोकों में सुख और दुःख तुल्य हैं उनको मर्त्य लोक कहते हैं, इस प्रकार के स्वर्ग, मर्त्य और नरक लोक बहुत हैं उनमें भी प्रत्येक प्रकार के स्थान और पदार्थ हैं कि जिनमें सुख व दुःख अधिक वा न्यून हैं जो इसी हेतु परमेश्वर ने सब प्रकार के स्थान और पदार्थ रचे हैं कि पापी, पुण्यात्मा और मध्यस्थ जीवों को यथावत् फल मिले।”

[स. प्र. प. सं., समु. ८]

“जब जीव शरीर से पाप करते हैं वे वृक्षादिक स्थावर शरीर को प्राप्त होते हैं।”

“जब मुक्ति होने का कर्म करता है तभी उसको मुक्ति होती है अन्यथा नहीं। प्रथम सृष्टि में कोई जीव पीहले ही जन्म में मुक्त हो गया होय इसमें कुछ आवश्यक नहीं, उसके पीछे जो कोई मुक्त भया होगा या होता है और होवेगा सो बहुत जन्म में ही होगा।”

“आदि सृष्टि में गर्भवत् से उत्पत्ति नहीं भई थी और किसी की व्याख्या करने की आवश्यकता भी नहीं है किन्तु सब स्त्री पुरुषों की युवावस्था ही ईश्वर ने रची थी। फिर वे उस समय अच्छा वा बुरा नहीं जानते थे जहाँ जिसका नेत्र अथवा बुद्धि, बुद्ध्यादिक जिस वाह्य पदार्थ में युक्त भए उसको एकटक देखते थे परन्तु यह अच्छा वा बुरा ऐसा नहीं जानते थे, परन्तु प्राण शरीर अथवा इंद्रिय इनमें चेष्टा गुणा है ऐसा नहीं जानते थे कि ऐसी चेष्टा करनी वा न करनी, फिर चेष्टा होने लगी वाह्य पदार्थों के साथ स्पर्शादिक व्यवहार भी होने लगने लगे, उनमें से किसी ने पत्ता फूल व घास स्पर्श किया वा जीव के ऊपर स्पर्श तथा दाँतों से चबाने लगे, उसमें से कुछ भीतर चला गया उसको देखके दूसरा भी ऐसा करने लगा, फिर करते रहकर सब बढ़ता चला तथा संस्कार भी हो चले होते हैं मनुष्यादिक व्यवहार भी होने लगे, सो पांच वर्ष तक उस समय किसी को पाप पुण्य भी नहीं लगता था, ऐसे ही आजकल भी पांच वर्ष तक बालकों को पाप पुण्य नहीं लगता, फिर

व्यवहार करने करने अच्छा बुरा भी कुछ जानने लगे, फिर परस्पर उद्दिष्टा भी करने लगे कि यह अच्छा है यह बुरा है और परमेश्वर ने भी उक्त पुरुषों के द्वारा वेदविद्या का प्रकाश किया।

“यज्ञ करने में जिसको अत्यन्त प्रीति अधिनाम यथायमं जो के अधिप्राय जानने वाले, देव नाम महादेव और इन्द्रादिक दिव्यगुणवाले, चरित्रवेद ज्योतिष शास्त्र चन्द्रादिक ज्योति, लोक वत्सरकाल और सूर्य लोक, पिता जो कि पिता की भाँड़े सब मनुष्यों का हित करने वाले और पितृलोक में रहने वाले, साध्य जो अधिमान हठादिक दोष रहित होके धर्म और विद्यादि गुणों को सिद्ध करने वाले तथा नारायण और वैकुण्ठसीदिक विष्णु आदिक देव जो वैकुण्ठादिक में रहते थे, जो मनुष्य सत्वगुण से युक्त से से कर्म करते हैं उनको ऐसी भीत होती है।”

ब्रह्मा ब्रह्म ज्ञान पर्यन्त विद्या का जानने वाला अथवा ब्रह्म लोक का अधिष्ठाता और उस लोक को प्राप्त होने वाले प्रजापति और विश्व सृज जो कि धर्म और विद्या से सब का पालन करने वाले वा सिद्ध जो कि परमाणु के संयोग वा वियोग करने वाले और उस विद्या के जानने वाले अथवा प्रजापति लोक के अधिष्ठाता वा उनको प्राप्त होने वाले धर्म, मत्तान बुद्धि, अव्यक्त नाम प्रकृति, यह सत्व गुणों की उत्तम गति है, यहाँ से योग कर्म और

उपासना का कोई फल व भोग नहीं है, सिवाय परमेश्वर के।

“दुःखों की अत्यन्त निवृत्ति जो निवृत्ति इसको मोक्ष कहते हैं कि सब दुःखों से छूट जाना और सदा आनन्द में परमेश्वर को प्राप्त होके रहना, फिर लेशमात्र भी सम्बन्ध दुःख का सम्बन्ध कभी नहीं होता, सो केवल एक परमेश्वर के आधारे में वह जीव रहता है और किसी का सम्बन्ध उसको नहीं होता सो परमेश्वर के योग से उस जीव में सर्वज्ञता त्रिकाल ज्ञान, सब पदार्थों का गुण और दोष इनका सत्य बोध भी सदा रहता है।”

“परमेश्वर जब सृष्टि रखी है कि जब तक संसार का अत्यन्त प्रलय होना होगा तब भी वे मुक्त जीव आनन्द में रहेंगे जब अत्यन्त प्रलय होगा तब कोई न रहेगा, ब्रह्म का सामर्थ्य रनप और एक परमेश्वर के बिना, सो अत्यन्त प्रलय तब होगा जब सब जीव मुक्त हो जायेंगे बीच में नहीं, सो अत्यन्त प्रलय बहुत दूर है, संभव मात्र होता है कि अत्यन्त प्रलय भी होगा, बीच में अनेक बार महा प्रलय होगा और उत्पत्ति भी होगा।”

[स. प्र., प्र. सं., समु. ८.]

देखना चाहिये कि मुसलमान वा अंग्रेज से कौन में दोष दोष मानते हैं और मुसलमानों वा अंग्रेजों देश की स्त्री से संग करते हैं वा अंग्रेजों देश की और अपने

पास घर में रख लेते हैं, इससे कुछ भेदन हो रहा है। यह बड़े अन्धकार की बात है कि मुसलमान और मंगरेल अंग्रेज में जो भेदन आदि भी हैं उनसे तो बहुत मानना और वैश्यादिकों में बहुत नहीं मानना, यह केवल शुक्ति शून्य बात है।

“मध्यम मध्य दो प्रकार का है कहते हैं, एक वैद्यक शास्त्र की रीति से दूसरा धर्म शास्त्र की रीति से देश काल वस्तु और अपने शरीर की प्रकृति, उनसे अनुकूल विचार करके मक्षरग करना चाहिये अन्यथा नहीं जिसे बल बुद्धि पराक्रम और शरीर में नैरोग्य वेद वैसा पदार्थ मध्य है सोई उक्त वैद्यक शास्त्र में लिखा है और “अमक्ष्यो ग्राम्यशूकरोऽमक्ष्यो ग्राम्य कुक्कुटः” इत्यादिक धर्म शास्त्र से अमक्ष्य का निर्णय करना, क्योंकि गांव का सूअर और मुर्गा मल ही खाता है, उसी का परिणाम मांस है प्रायः मल ही खाता है उसी का परिणाम मांस होगा, उसके खाने से शरीर में दुर्गन्ध है, दुर्गन्ध होगा उससे रोगोत्पत्ति सम्भव है का होना सम्भव है और चित्त भी अप्रसन्न हो जायगा वैसा ही धर्म शास्त्र की रीति से मध्य अमक्ष्य तथा जितने मनुष्यों के उपकारक पशु हैं, उनका मांस अमक्ष्य।”

परन्तु मनुष्य लोगों को यह चाहिये कि

गाय बल भेदन, डेढ़ी भेदन और ऊठ आदिक पशुओं को कभी न मारे, क्योंकि इन्होंने सब मनुष्यों की आजीविका चलाई है जितने दुग्धादिक पदार्थ होते हैं वे सब उत्तम ही होते हैं और एक पशु से बहुत मनुष्यों की आजीविका होती है मारने से जहां सौ मनुष्यों की मृत्ति होती है मनुष्य तृप्त होती है होते हैं, उन गाय आदिक पशुओं के बीच में से एक गाय की रक्षा से दस हजार मनुष्यों की रक्षा हो सकती है इससे इन पशुओं को कभी न मारना चाहिये। प्रश्न: इन पशुओं को के न मारने से पृथ्वी भर जायेगी फिर भी तो मनुष्यों को हानि होने लगेगी। उत्तर: ऐसा न कहना चाहिये क्योंकि व्याघ्रादिक पशु उनको मारेगे और कितने ही रोगों से भी मरेगे इससे अत्यन्त नहीं होने पावेगे और मनुष्यों के मारने से घृतादिक पदार्थ और पशुओं की उत्पत्ति भी नष्ट हो जाती है।

“रसोऽहं प्रादिक जो सेवा सो पूर्व पुरुष जो धृष्ट उसी का अधिकार है।”

“मोलन में सब सब से अधिक पाखण्ड कान्ध-कुब्ज का है, क्योंकि जल भी पीते हैं तो बूते उतार के हाथ पैर धो के पीते हैं, चौका दे के तब चने चबोते हैं सो बड़े दुःख पीते हैं।”

नशा करना सब को वर्जित है परन्तु औषध के हेतु कि रोग निवृत्ति होता होय

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

तो योगशास्त्राजल और मध्यग्रहण करना सुषु-
तादिक वैद्यक शास्त्र में लिखा है।

“ये देश समुल्लास शिक्षा के विषय में लिखे
हैं योग आर्यावर्तवासी मनुष्यों जैन मुसलमान
और अंगरेजों के विषय में लिखे हैं आचार्यनन्द
अनाचार सत्यासत्य, मत मतान्तर के खण्डन
और मण्डन के विषय में लिखेंगे इनमें से
प्रथम समुल्लास में आर्यावर्तवासी मनुष्यों के
मत मतान्तर के खण्डन और मण्डन के विषय में
लिखा जायगा, दूसरे समुल्लास में जैनमत के खण्डन
और मण्डन के विषय में लिखा जायगा, तीसरे समु-
ल्लास में मुसलमानों के मत के विषय में खण्डन
और मण्डन लिखेंगे और चौथे समुल्लास में अंगरेजों
के मत के खण्डन और मण्डन के विषय में लिखा
जायगा, सो जो देखना चाहें खण्डन और मण्डन
की युक्ति उन चारों समुल्लासों में देखें, दश
समुल्लास तक खण्डन वा मण्डन नहीं लिखा है।
संस्कृत जो गुजरात देश और पञ्जाब के
पश्चिम भाग में नदी है उससे लेकर नेपाल के पूर्व
भाग की नदी से लेकर समुद्र तक इन दोनों के बीच
में जो देश है सो आर्यावर्त देश है और वे देव नदी
कहाती हैं अर्थात् दिव्य देश के प्रान्त भाग में होने
से इनका नाम देव नदी है सो देव निर्मित
देश है, इस देश का नाम आर्यावर्त कहते हैं।

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

अर्थात् दिव्य गुणों से चतर्ही।

“इस देश में जिसका राज्य होता है वह देवदेव
तो भी धन से पूरी हो जाता है इसी हेतु इसका नाम
आर्यावर्त है आर्य नाम श्रेष्ठ मनुष्य और श्रेष्ठ पदार्थ
इनसे युक्त अर्थात् आर्य है इस हेतु इस देश का
नाम आर्यावर्त कहते हैं।

“इति देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।

स्वस्व चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्या पृथिव्यस्य मानसाः॥
मनु॥
इस देश में अग्रजन्मा नाम सब श्रेष्ठ गुणों से
सम्पन्न जो पुरुष होवे उससे सब भूगोल की पृथिवी के
मनुष्य शिक्षा अर्थात् विद्या तथा संसार के सब व्यव-
हारों का यथावत विज्ञान करें, इससे ब्रजाना जाता
है कि प्रथम इसमें मनुष्यों की सृष्टि भई थी पीछे
सब द्वीपान्तर में फैल सब मनुष्य फैल गये।

“सर्व देश भाषाओं का मूल जो संस्कृत सो आर्या-
वर्त ही में सदा से चला आता है आजकल कल भी
कुछ देरवने में आता है परन्तु फिर भी सब देशों
से संस्कृत का प्रचार अधिक है जर्मनी और रीवा-
यत आदिक देशों में संस्कृत के पुस्तक इतने नहीं
मिलते जितने कि आर्यावर्त देश में मिलते हैं और जो
किसी देश में संस्कृत के थोड़े बहुत पुस्तक होंगे
सो आर्यावर्त ही से लिखे होंगे वरन् कुछ भी लिखे
नहीं, सो इस देश से मित्र देश वालों ने पहिली विद्या
ग्रहण की थी उससे यूनान देश, उससे रूस, फिर

फिर स्मृति से किंसास्थान आदि में विद्या फैली है परन्तु संस्कृत के बिना इनमें गिरिबा, लालिप, जंग राज और अरब देश वालों की भाषा बन गई है सो इनमें कुछ अधिक लिखना आवश्यक नहीं क्योंकि इन भाषाओं के पढ़ने से बोल सब जानते हैं और पता भी ऐसा ही मिलता है, एक गोल हस्त कर साहेब ने पीहले ऐसा ही निश्चय किया है कि जितनी विद्या का मत फैलें हैं मूगल में वे सब आर्वाकत ही से लिखे हैं और काशी में विलेण्टन सोहमेने यही निश्चय किया है कि संस्कृत सब भाषाओं की माता है तथा दाश शिकोह ने भी यह निश्चय किया है जो विद्या है सो संस्कृत में ही है क्योंकि मैंने सब देशों की भाषाओं को देखा तो भी मुझे को बहुत सन्देह रह गये परन्तु जब मैंने संस्कृत देखा तब मेरे सब सन्देह निवृत्त हो गए और अत्यन्त प्रसन्नता मुझे मई और काशी में मान-मन्दिर जोरवा है उसमें महाराज सर्वादि मानसिंह जी ने स्वर्गाल के कला और यन्त्र ऐसे रचे थे जिसे में स्वर्गाल का सब हाल देखा पड़ता था परन्तु आजकल उसकी मरम्मत न होने से बहुत कला यन्त्र बिगड़ गए हैं फिर भी आजकल महाराज सर्वादि रामसिंह जी ने स्थान को कुछ मरम्मत कराई है जो उस यन्त्र को भी करावे तो कुछ राज बना रहेगा

अन्यथा नहीं, जब से महाभारत युद्ध मया उस दिन सत्याधेवन को बुरी दशा आई है सो नील बुरी ही दशा होती जाती है।

“क्योंकि महाभारत युद्ध के पीहले निम्ने श्रुति मुनियों के रचे गये प्राचीन ग्रन्थ हैं उनमें मूर्ति पूजन का लेश मात्र भी कथन नहीं है इससे हट निश्चय से जाना जाता है कि इस आर्वाकत देश में मूर्ति पूजन नहीं था किन्तु जेनों के राज्य ही से चला है।”

“एक द्विद देश के ब्राह्मण काशी में आये एक गौड़ पाद परिष्ठत थे उनके पास व्याकरण पूर्वक वेद पर्यन्त विद्या पढ़ी थी जिसका नाम शंकराचार्य था वे बड़े परिष्ठत मये थे उनने विचार किया कि यह बड़ा अनर्थ मया नास्तिकों का मत आर्वाकत देश में फैल गया और वेदीदक संस्कृत विद्या का प्रायः नाश हो गया है सो नास्तिक मत का खण्डन और वेदीदक संस्कृत विद्या का विचार है वे अपने मन से ऐसा विचार करके सुधन्वा नाम राजा के पास गये क्योंकि बिना राजाओं के सहाय से यह बात नहीं हो सकेगी सुधन्वा राजा ने भी संस्कृत पढ़ा था में परिष्ठत था और जेनों के भी सब संस्कृत ग्रन्थ पढ़ा था सुधन्वा जेन मत में था परन्तु विद्या और बुद्धि के होने से उसको अत्यन्त विश्वास नहीं था क्योंकि कि वह

Date

सत्याधि विवेचन

Notes

संस्कृत पद भी पढ़ाया और उसके पास जैन मत के पीठित भी बहुत थे, फिर शंकराचार्य ने राजा से कहा कि आप सभा करा दें और उसमें उनसे मेरा शास्त्रार्थ होय और आप मुझे फिर जो सत्य होय उसको मानना चाहिये, उसने स्वीकार किया और सभा भी कराई उसमें अपने अपने पास जैन मत के पीठित थे और भी वृक्ष से जैन मत के पीठित बुलाये, फिर सभा हुई उसमें यह प्रतीति हो गई कि हम वेद और वेद मत का स्थापन करेंगे और आपके मत का खण्डन करेंगे तथा उन पीठितों ने भी ऐसी प्रतीति की कि हम वेद और वेद मत का खण्डन करेंगे और अपने जैन मत का प्रवर्धन करेंगे, सो उनका परस्पर शास्त्रार्थ होने लगा, उस शास्त्रार्थ में शंकराचार्य का विजय भया और जैन मत वाले पीठितों का पराजय हो गया. फिर कोई युक्ति जैनो की नहीं चली किन्तु शंकराचार्य की बात प्रमाणां सिद्ध हुई सुधन्वा राजा बुद्धिमान था उसी समय उसको जैन मत में प्रवृत्ता और वेद मत में प्रवृत्ता हो गई, राजा और शंकराचार्य जी का रुफान्त में विचार भया कि आपो कर्त्त ने बड़ा मुनिक हो गया है इससे वेदिकों वेदादिकों का प्रचार और वैदिक कर्मों का प्रचार होना चाहिये तथा जैनो का खण्डन

Date

सत्याधि विवेचन

Notes

होना चाहिये सो शङ्कराचार्य ने कहा कि जैनो का आजकल बड़ा बल है और वेद मत का बल नहीं है इससे शास्त्रार्थ तो हम करने की तयारी है परन्तु कोई उपाधि करे प्रयत्न शास्त्रार्थ ही न करे तो हमारा कुछ बल नहीं, इसमें आप लेमा प्रवृत्त होय कि कोई कोई अन्यथा अन्यथा करे उसको आप शिक्षा करें, सो राजा ने उस बात को स्वीकार किया कि वह हम करेंगे, परन्तु हे राजा सम्बन्धी हैं उनके पास हम चिन्ही लिखते हैं और आपको वहां भेजेंगे शास्त्रार्थ करने के हेतु, फिर जो भी मिल जाय तो बहुत अच्छी बात है, फिर शङ्कराचार्य उन राजाओं के पास गये और समाज में तथा जैन मत के पीठितों का फिर पराजय हो गया, वे हे राजा भी सुधन्वा से मिले और और सब की सम्मति से संस्कार भी भया तथा वैदिक कर्म भी करने लगे, तब तो सूर्यवर्त्त में सर्वत्र यह बात प्रसिद्ध हो गई कि एक शंकराचार्य नामक संन्यासी वेदादिक शास्त्रों को पढ़े बड़े पीठित हैं जिससे जैन लोगों के बहुत पीठित परास्त हो गये फिर उन सात राजाओं ने शंकराचार्य की स्था के हेतु बहुत मूल्य तथा सेवक और सवारी आदि भी रख दिया और सब ने कहा कि आप सर्वत्र भ्रमण करें आचार्यवर्त्त में सम्मता करें और जैनो का खण्डन करें, इसमें कोई जबरदस्ती करेगा अन्यथा से उसको हम लेमा सम्प्रा लेंगे, फिर शंकराचार्य जी ने जहां जैनो

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

जैनों के पीछे तब और जैनों का अत्यन्त प्रचार था वहां इन्द्रमारा कर उनसे सर्वत्र शास्त्रार्थ किया परन्तु जैन लोगों का सर्वत्र पराजय हो होता गया क्यों कि दो तीन दोष उनके बड़े भारी थे, एक तो ईश्वर को न मानना, दूसरा वेदादिक सत्यशास्त्रों का श्रवण न करना, तीसरा जगत स्वभावही से होता है इसका रचने वाला कोई नहीं इत्यादि अन्य भी बहुत से दोष हैं।

इसका 33 वर्ष की आयु में शंकराचार्य का बारीर छूट गया, उनके मरने में सब लोगों का उत्सह मंग हो गया, वह भी आर्य वर्त देश वालों के बड़े अभिमान, यदि शंकराचार्य दश या बारह भी जीते तो विद्या का प्रचार यथावत् हो जाता, फिर आर्य वर्त देश की ऐसी दुर्दशा कभी क्यों कि जैनों का श्रवण तो हो गया परन्तु विद्या का प्रचार यथावत् नहीं मारा।

“यह बात इक्कीस वा बाईस सै बरसकी है इसके पीछे 200 वा 300 बरस तक साधारण पढ़ना और पढ़ाना रहा फिर अंग्रेजों में विक्रमादित्य राजा कुछ अच्छा मया उसने राज्य में धर्म का कुछ प्रकाश किया और बहुत कवि न्याय से हो न लो उसके राज्य में प्रजा को सुख भया था क्योंकि विक्रमादेवजी बुद्धिमान और शूर वीर तथा धर्मन्मा धर्मात्मा था इसमें कोई अन्याय नहीं करने पाता था, परन्तु वेदादिक विद्या का प्रचार उसके राज्य में भी

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Page

101

यथावत् नहीं मया किन्तु साधारण जैनेवायों में फिर विक्रमादित्य के से 500 वर्ष के पीछे राजा नेत्र भये, उसने संस्कृत का प्रचार किया सो नवीन ग्रन्थों की रचना और प्रचार किया था, वेदादिकों का नहीं परन्तु कुछ संस्कृत का प्रचार राजा नेत्र ने ऐसा कराया कि चाण्डाल और हल जैनेवायों के भी कुछ लिखना पढ़ना और संस्कृत बोलने में थोड़ी कालिदास गड़रिया था परन्तु इलाकादिक स्थलेला था और राजा नेत्र भी नरु इलाकरचने में कुशल था कोई एक श्लोक कभी स्वके ले जाता था उनके पास, उसका प्रसन्नता से स्तुकार करते थे और जो कोई ग्रन्थ बनाता था तो उसका बड़ा भारी स्तुकार करते थे फिर लोभ से संसार में बहुत मनुष्य लोग नरु ग्रन्थ रचने लगे उससे वेदादिक श्रुतान्त पुस्तकों की प्रायः प्रवृत्ति हो गई और राजा नेत्र ने “संजीवनी” नामक इतिहास ग्रन्थ बनाया है उसमें बहुत परिचितों की सम्प्रति है और यह बात उसमें लिखी है कि तीन ब्राह्मणों ने ब्रह्म वेत्तादिक तीन पुराण स्वये इनसे राजा नेत्र ने कहा कि और के नाम से तुमको ग्रन्थ रचना उचित नहीं था और महाभारत की बात लिखी है कि कितने हजार श्लोक 20 बरस के बीच में व्यासजी का नाम कर के लोगों ने मिला दिये हैं, यदि ऐसे ही पुस्तक वेदों तो एक ठंठ का मार हो जायगा सो उस संजीवनी ग्रन्थ में राजा

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

मोज ने अपने क प्रकार की बातें, पुस्तकों के विषय और देश के वर्तमान के विषय में इतिहास लिखे हैं, सो वह "संजीवनी" इतिहास ग्रन्थ बेटेश्वर के पास हैलोपुरा रुक गांव है उसमें चौबे लोग रहते हैं वे जानते हैं जिसके पास वह ग्रन्थ है परन्तु देरवने वालिखने को वह पीठित किशो को नहीं देता क्योंकि उसमें सत्य र बात लिखी है उसके प्रसिद्ध होने से पीठितों की आजीविका नष्ट हो जाती है इस भय से वह उस ग्रन्थ को प्रसिद्ध नहीं करता।

"राजा मोज के पीछे कोई अच्छा राजा नहीं भया, उस समय जैन लोगों ने जहाँ तहाँ मन्दिरों में मूर्ति प्रसिद्ध किया।

"एक महामुद गजनबी इस देश में आया और सोने और चांदी की बहुत सी मूर्तियों को बूझ लिया, बहुत पुजारी और पीठितों को पकड़ लिया, शत को पिसान पिसवावे और जहाँ कोई पुस्तक पाया नष्ट भ्रष्ट कर दिया दिन में जाजरसर आदि को साफ करवावे, ऐसे वह आर्योवर्त में बारह दैफ आया और बहुत लूट मार अन्याय अन्याय इस देश में उसने किया, उसने इस देश की बड़ी दुर्दशा की, यहाँ तक कि स्त्री कन्या ब बालक को भी पकड़ के दुःख दिया और बहनों को मार डाला, ऐसा बड़ा अन्याय उन्ने किया, सो जिस देश में ईश्वर की

Date

सत्यार्थ-विवेचन

Notes

उपासना को छोड़ के, काष्ठ, पाषाण, वृक्ष, घास कुत्ते गधे और निम्न मिट्टी आदि की पूजा से ऐसा ही फल होगा, उत्तम कहां से होगा।

"वह मन्दिर द्वारका के पास 'प्रभास' क्षेत्र स्थान में था और उस मूर्ति का नाम सोमनाथ बकरवा था, फिर महामुद गजनबी ने सुना कि उस मन्दिर में बड़ा माल है, ऐसा सुनके अपने देश से सेना लैके चढ़ा तो जब पंजाब में आया तब हल्ला हो गया और सोमनाथ की ओर चला नव लोगों ने जाना कि सोमनाथ के मन्दिर को तोड़ेंगे और लूटेंगे, ऐसा सुनके बहुत राजा पीठित और पुजारी सेना लैलेके सोमनाथ की रक्षा के हेतु इकट्ठे भये सोमनाथ के पास जब वह डेढ़ सौ दो सौ कोस दूर रहा तब पीठितों से राजाओं ने पूछा कि मुहूर्त देरवना चाहिए, हम लोग आगे जाके उन से लड़ें, तब पीठित लोगों ने इकट्ठे होके मुहूर्त देरवा परन्तु मुहूर्त बनाना नहीं फिर नित्य मुहूर्त ही देरवते रहे परन्तु कोई दिव्य चन्द्रमा कोई दिन और ग्रह नहीं बने, कोई दिन दिक्कूल सम्मुख आया कोई दिन योगिनी, और कोई दिन काल नहीं बना, सो पीठितों की बुद्धि को कालादिकों के भ्रमों ने रवा लिया, और राजा लोग बिना पीठितों के आज्ञा से कुछ करते नहीं थे, सो पीठित और राजा लोग प्रायः मूर्ख हो गये जो मूर्ख नहीं होते शतो पाषाणादिक मूर्ति बंधों पूजते और मुहूर्ताविक के भ्रमों से बंधों नष्ट

होते, ऐसे विचार करने ही रहे उसकी सेना
दूसरी मंडल पर पहुँची तब राजा लोगोंने
पीठियों से कहा कि अब तो जल्दी मुहूर्त
देखो तब पीठियों ने कहा कि अब आज
मुहूर्त अच्छा नहीं है जो यात्रा करोगे तो हार
तो तुम्हारा पराजय ही हो जायगा, तब वे
ब्राह्मणों से डर के बैठे रहे जब महमूद
राजनवी धीरे धीरे पाँच छः कोश के ऊपर
ग्रीक ऊपर ठहरा और दूतों ने ही सब खबर
संग्रहित कि वे क्या कहेंगे करने हैं, दूतों ने
कहा कि आपसे मैं मुहूर्त विचार करने हैं, महमूद
राजनवी के पास 30 हजार सेना थी अधिक
नहीं और उनके पास दोतीन लाख सेना थी
फौज थी, फिर उसके दूसरे दिन प्रातः काल राजा
पीठित और पुजारी मिलके मुहूर्त विचारने लगे
तो सब पीठियों ने कहा कि आज चन्द्र
मास अच्छा नहीं है और भी गुरुकुर है, पुजारी लोग
और मूर्ति के आगे जाके गिर पड़े और अन्यन्त
रोकन किया है महाराज इस दुष्ट को रवाला
और अपने स्वर्गों का सहाय करो परन्तु वह लेखा
क्या कर सकता था, सब से कहने लगे कि
आप लोग कुछ चिन्ता न करें मत करो, महादेव
उस दुष्ट को ऐसे ही मार डालेंगे या वह महादेव
के भव से वहीं से ही मारा जायगा, उसका क्या

सामर्थ्य है कि साक्षात् महादेव के पास आस
और सन्मुख दृष्टि कर सके, ऐसे सब परस्पर
बक रहे थे फिर कुछ लड़ाई हुई और मुसलमान
भी डरे कि विजय होना था पराजय उस समय
और पुस्तक कैलाश के बहुत से मन्त्रों का जप और
पाठ करते थे और कहते थे कि अब देवना देवता और
मन्त्र, हमारा पाठ सिद्ध होता है सो वह वहाँ ही अन्यथा हो
जायगा, सो वही मण्डली की मण्डली जप पाठ और
पूजा कर रही थी और मूर्ति के सामने आँखें गिरके
पुकारते थे, एक सभा लग रही थी, राजा और पीठित
उस समय मुहूर्त विचार करते थे उसके निकट
एक एक पर्वत था और महमूद राजनवी ने एक
तोप लगाई और सभा के बीच में गोला मारा, उस समय
कोई दंत धावन करता था, कोई सोता था, कोई स्नान
करता था इत्यादिक व्यवहारों में गाफिल थे उस गोल
से सब पीठित लोग पोथी पत्रा छोड़ के भगे और
राजा लोग भी भाग उठे तथा सेना भी अपने स्थानों से
भाग उठी और महमूद राजनवी ने सेना सीहन धावा
करके उस स्थान पर रुक पहुँचा, उसको दरवे के सब
भाग गये, पीठित पुजारी सिपाही तथा राजाओं को
उसने पकड़ लिया और बांध लिया और बहुत सी
मार पड़ी उनके ऊपर तथा किसी को मार भी डाला,
और बहुत भाग गये, क्योंकि उन पीठियों के उपदेश
से सोलह पहर के बैठे थे और कथा सुनी थी कि

Date

अन्याय-विवेचन

Notes

मुसलमानों का स्पर्श नहीं करना और उनके दर्शन से भी धर्म जाता है ऐसी मिथ्या बात सुनके भाग उठे, महमूद गजनवी की सेना मन्दिर के चारों ओर हो गई और आप मन्दिर के पास पहुंचा तब मन्दिर के महन्त और पुजारी हाथ जोड़ के खड़े भये, उनसे पुजारियों ने कहा कि आप जितना चाहें उतना धन ले लीजिए परन्तु मन्दिर और मूर्ति को न तोड़िये क्योंकि इससे हम लोगों की बड़ी आजीविका है ऐसा सुनके महमूद गजनवी बोला कि हम बहुत बड़े बाले नहीं किन्तु उनके तोड़ने वाले हैं तब तो वे हँसे और कहा कि एक करोड़ रुपैया आप ले लीजिये परन्तु इसके मत तोड़िये, ऐसा कहते सुने तीन करोड़ तक कहा परन्तु महमूद गजनवी ने नहीं माना और उनकी मुसक चढ़ा लिया फिर उनके लेके मन्दिर में गया और उनसे पूछा कि रवजाना कहाँ है सो कुछ तो उन्ने बतला दिया फिर उसके लोभ आ गया कि और भी कुछ होगा फिर उनके आरा पीटा।

"फिर उस मूर्ति को महमूद गजनवी ने अपने हाथ से लोहे के घन को पकड़के मूर्ति के पैरों मारा उससे मूर्ति का पैर फट गई उसमें से बहुत जवा-हिरात निकला।"

"उसने सब ले लिया, सो अठारह करोड़ का माल उस मन्दिर से उसने पाया, फिर बहुत सो

Date

अन्याय-विवेचन

Notes

गाड़ी कंठ और मजूर जो उसके पास थे और भी वहाँ से पकड़ लिये, उनके ऊपर सब सामान को लाद के अपने देश की ओर चला, सो छोड़े से छोड़े पण्डित महन्त और पुजारी तथा ब्राह्मण, क्षीत्रिय, वैश्य और शूद्र स्त्री बालक दश हजार तक पकड़ के संगे ले लिये उनका यज्ञोपवीत तोड़ डाला, मुख में धूक दिया और छोड़े र सूखे चने नित्य खाने की देता था और जाजकर साफ करवावे, पिसवावे, घास क्लिखवावे और घोड़ों की लोद उठवावे और मुसलमानों के बरतन मंजवावे और सब प्रकार की नीच सेवा उनसे ले, ऐसे कराता र जब मक्का के पास पहुँचा तब अन्य मुसलमानों ने कहा कि इनका फरोका यहाँ रखना उचित नहीं, फिर उनके बुरी दशा में मार डाला।

"ऐसे ही बारह देके वह आया है और दो तीन बार मथुरा की भी दुर्दशा ऐसी ही की थी और जहाँ वह गया था वहाँ उस देश की ऐसी दुर्दशा की थी और ठाकुर की नाई आला भा, मार के जो कुछ पाता था उसे देश में ले जाता था।"

"सो उस दिन से मुसलमान लोग बहिष्कृत होकर देश छोड़ द्योगे हैं सो आर्यावर्त के प्रताप से आज तक भी धन चना खाता है, और आर्यावर्त देश अपने ही हाथों से नष्ट होता जाता है सो हमको बहुत अप-शोक है कि ऐसा देश और इस प्रकार का धन जिस देश में है जो देवा और इस प्रकार का धन

जिन देश में है सो देश बाध्यावस्था में विवाह, विद्या का त्याग, मूर्ति पूजन आदिक पारवर्षों की पूजा माना प्रकार के मजहबों का प्रचार, विषयाज्ञाति और वैद विद्या का लोप, जब तक ये दोष रहेंगे तब तक आर्यावर्त देश वालों की अधिक अधिक दुर्दशा ही होगी।

“फिर चार ब्राह्मणों ने विचार किया कि कोई क्षत्रिय राजा इस देश में अच्छा नहीं है इसका कुछ आग्रह करना चाहिये, वे चारों ब्राह्मण अच्छे थे क्योंकि सब मनुष्यों पर के ऊपर कृपा करके अच्छी बात विचारते, यह अच्छे पुरुषों का काम है नीच का नहीं, फिर उन क्षत्रियों के बालकों में से चार अच्छे बालक हाट लिये और उन क्षत्रियों से कहा कि तुम लोग स्वामि पौने का प्रबन्ध रखना बालकों का श्रवण उनसे स्वीकार किया और मेका भी साथ रख दिये, वे सब आयु पर्वत के ऊपर जाके रहे और उन बालकों को ब्रह्मश्रम्यास करके वैष्णव व्यवहारों की शिक्षा करने लगे।”

“फिर उनका यथाविधि संस्कार भी करने किया संध्योपासन और अग्नि होत्रादिक वैदिक कर्मों की उन्हें शिक्षा किया फिर व्याकरणा, इन्द्रजित, काव्यालङ्कार, सूत्र और सनातन कोश यथावत् पढ़ाये विद्या उनको पढ़ाई फिर वैद्यक शास्त्र तथा गान विद्या और धनुर्विद्या अर्थात् युद्ध

विद्या भी उनके अच्छे प्रकार से पढ़ाई फिर राज-धर्म जैसे कि प्रजा से वर्तमान करना और न्याय करना, दुष्टों को दण्ड देना और भूतों का पालन करना यह भी सब पढ़ाया।

उन पाण्डितों की शिक्षितियों ने ऐसे ही चार कन्या, रत्नपुत्रा सम्पन्न उनके अपने पास रख के व्याकरणा, धर्मशास्त्र, वैद्यक, गान विद्या तथा नाना प्रकार के शिष्यकर्म उनके पढ़ाये और व्यवहार की शिक्षा भी की तथा युद्ध विद्या की शिक्षा, गर्भ में बालकों का पालन और पीत का सेवा का यथावत् उपदेश भी किया फिर उन पुरुषों के परस्पर चारों का युद्ध करना और करने का यथावत् अभ्यास कराया, ऐसे चलीस वर्ष के जब वे पुरुष भये और बीस बीस वर्ष की वे कन्या भई तब उनकी प्रसन्नता और गुरुओं की परीक्षा कर एक से एक का विवाह कराया, जब तक विवाह नहीं भया था तब तक उन पुरुषों और कन्याओं की यथावत् रक्षा की गई थी, इससे उनके विद्या बल बलबुद्धि तथा पराक्रम आदिक गुरा भी उनके शरीर में यथावत् भये थे, फिर उनसे ब्राह्मणों ने कहा कि तुम लोग हमारी आज्ञा का पालन करो, तब उन सब ने कहा कि जो आपकी आज्ञा होगी सो इ हम करेंगे, उनसे उनसे कहा कि हमने तुम्हारे ऊपर जो परिश्रम किया है सो केवल जगत के उपकार हेतु किया है, सो आप लोग देखो कि आर्यावर्त में

Date

सत्याथ-विवेचन

8 Notes

गदर मच रहा है, मुसलमान लोग इस देश में भी कि
वही दुश्शा करते हैं और धनादिक लूट के लो जाते
हैं सो इस देश की नित्य दुश्शा होती जाती है सो
आप लोग राजधर्म से यथावत् पालन करो और
दुष्टों को यथावत् दण्ड दो परन्तु एक उपदेश
सदा हृदय में रखना कि जब तक बेचियों की रक्षा
और रजितीन्द्रिय रहेंगे तब तक तुम्हारा
सब कार्य सिद्ध होता जायगा और हमने तुम्हारा
विवाह जो अब कराया है सो केवल परस्पर रक्षा के
हेतु किया है तुम और तुम्हारी स्त्रियां संग रहोगे
तो बिराहोगे नहीं और सन्तानोत्पत्ति मात्रा ब्र-
ह्म का प्रयोजन जानना और मन से भी पर पुरुष
वा परस्त्री का चिन्तन नहीं करना और विद्या
तथा परमेश्वर की उपासना और सत्यधर्म में सदा
स्थित रहना, जब तक तुम्हारा राज्य जैसा तक
स्त्री पुरुष दोनों ब्रह्मचर्याश्रम में रहेंगे क्योंकि
जो कीड़ा सक्त होगे तो बलादिक तुम्हारे शरीर में
न्यून हो जायेंगे तो युद्धादिकों में उन्माह भी न्यून
हो जायगा और हम भी एक के साथ एक रहेंगे
सो हम और आप लोग चले और चल के
यथावत् राज्य का प्रबन्ध करें फिर वे वहाँ से चले
वे चार हज़र नामों से प्रख्यात थे, योहान पवार
सोलंकी इत्यादिक, उन्ने दिल्ली आदिक में राज्य
किया कुछ प्रबन्ध भी भया।

Date

सत्याथ-विवेचन

Notes

जब राज्य करने लगे, कुछ काल के पीछे
सहायुद्दीन गौरी एक मुसलमान था सो भी उसी
प्रकार इस देश में आया था कनौज आदिक में
उस समय कनौज का बड़ा मारी राज था, सो इसके
मय के मोर अपने ही जाके मिला और युद्ध कुछ भी
नहीं किया फिर उसने अन्यत्र जहां तहां युद्ध किया
सो उसका किजय भया और प्रार्थना वलों का पण्डित
भया फिर दिल्ली वलों से कोई वक्त उसका युद्ध
भया, उस युद्ध में पृथ्वीराज भाग गया और उसने
अपना सेनाध्यक्ष दिल्ली में रक्षा के हेतु रख दिया,
उसका नाम कुतुबुद्दीन था, वह वहां गया जब वहां
रहा तब कुछ दिन के पीछे उन राजाओं को निकाल
के आप राजा भया, उस दिन से मुसलमान लोग यहाँ
राज्य करने लगे, और सब ने कुछ जुलूम किया
परन्तु उनके बीच-बीच में एक बर बादशाह मल्का
भया और न्याय भी संसार में होने लगा, उसने
अपनी बहादुरी और बुद्धि से सब गदर मिटा दिया,
उस समय राजा प्रजा सब सुखी थे, परन्तु आर्या-
वर्त के राजा और धनादय लोग विक्रमादित्य के
पीछे सब विषय सुख में फंस रहे थे, उससे उनके
शरीर में, बल, बुद्धि, पराक्रम और बुर वीरता प्रायः
नष्ट हो गई थी।

“दिल्ली में एक और राजा बादशाह भया
उसने मयुर काशी आदिक और अन्य स्थान में भी

जान के मन्दिर और मूर्तियों को लोड़ डाला और
उहाँ ने बड़े मन्दिर से उस स्थान पर भी अपनी
मसीजें बना दीं जब काशी में मन्दिर लोड़ने को
आया तब विष्णुनाथ कुरु में गिर पड़े और
साधव रुक ब्राह्मण के घर में भोग गये ऐसा
ब्राह्मण कहते हैं सो हमको वह बात मूठ
मालूम पड़ती है क्योंकि वह पाषाण तथ्यातु जड़
पदार्थ कैसे भोग सकता है।

“महाभारत बुद्ध के पीछे आर्यावर्त देश
में अर्द्धे शताब्दी, उनके बुद्धि, विद्या, बल, पराक्रम
तथा धर्म निष्ठा और शूरवीरतादिक गुणों से
इसमें उनका राज्य यथावत होता था। सोइस्राकु
स्मार, रघु, दिलीपदिक चक्रवर्ती राजा हुए थे
और उनमें किसी प्रकार का पारवण्ड नहीं था।
सदा विद्या की उन्नति और अच्छे र कर्म आप
करते थे और प्रजा से करते थे और उनका कभी
पराजय नहीं होता था तथा अधर्म से कभी बुद्ध
नहीं करते थे और बुद्ध से कभी निवृत्त भी नहीं
होते थे, उस समय से ले के जैनों के राज्य से
पीछे तक इसी देश के राजा होते थे, अन्य देश
के नहीं, सो जैनों और मुसलमानों ने इस देश को
बहुत बिगाड़ा है सो आज तक बिगड़ता ही
जाता है, सो आजकल अंगरेजों का राज्य होने
से, उन राजाओं के राज से अधिक सुख भया है,

क्यों कि अंगरेज लोग अतः मतान्तर की बात से हाव
नहीं डालते और जो पुस्तक अच्छा पते हैं उसकी रक्षा
करते हैं और जिस पुस्तक के भी खपये लगते थे उस
पुस्तक का ह्यापा होने से पांच रुपये पर मिलता है,
परन्तु अंगरेजों से भी एक काम अच्छा नहीं भया
जो कि चित्रकूट परवत पर महाराज अमृतशयजी का
पुस्तकालय था उसको जला दिया, उसमें करोड़ों
रुपये के लारवला अच्छे पुस्तक नष्ट कर दिये
सो आर्यावर्त वासी लोग इस समय सुधर जाय तो
सुधर सके हैं, और जो पारवण्ड ही में रहते तो
अधिक रही नाश होना इनका, इसमें कुछ सन्देह नहीं
क्यों कि आर्यावर्त देश के बड़े राजा और धनदाय
धनाढ्य लोग ब्रह्मचर्याश्रम, विद्या का प्रचार और
धर्म से सब व्यवहारे का करना और वैद्यार्थ्य मना-
दिकों का त्याग करें तो देश की उन्नति हो सकती है
परन्तु जब पाषाणादिक मूर्ति पूजन, वैरागी, पुरोहित
महाचार्य अच्छे से अकर्म हैं और कथा कहने वालों
के जालों से छूटें तब उनका अच्छा हो सकता है नहीं
अन्यथा नहीं।

मुसलमान की भाषा पढ़ने में अथवा किसी देश
की भाषा पढ़ने में कुछ दोष नहीं होता किन्तु
कुछ गुण ही होता है “अपशब्द पूर्वके ज्ञान
पूर्वके शब्द ज्ञान धर्म” यह व्याकरणा महाभाव
का वर्ण वचन है, इसका यह अर्थ प्रायः है कि

Date

संन्यास विवेचन

१० Notes

अपशब्द ज्ञान अवश्य करना चाहिये क्योंकि देश-
देशान्तर की भाषा को पढ़ना चाहिये क्योंकि
उनके पढ़ने से बहुत व्यवहारों का उपकार
होता है और संस्कृत शब्दों के ज्ञान का भी
उनको यथावत् बोध होता है, जितनी देशों
की भाषा जानें उतना ही पुरुष को अधिक
ज्ञान होता है क्योंकि संस्कृत के शब्द बिगड़
के देश भाषा होती है, उससे इससे इनके
ज्ञानों से परस्पर संस्कृत और भाषा के ज्ञान में
उपकार ही होता है।

“महाभारत में लिखा है कि युधिष्ठिर और
विदुरादिक अरबी आदिक देश भाषा को जानते थे,
सोई जब युधिष्ठिरादिक लोहाग्रह की और चले
तब विदुर जी ने युधिष्ठिर को अरबी भाषा में
समझाया और युधिष्ठिर ने अरबी भाषा में
प्रत्युत्तर दिया यथावत्, उसको समझ लिया
तथा राजसूय और अश्वमेध यज्ञ में देश देशान्तर
तथा द्वीप द्वीपान्तर के राजा और प्रजाप्राण थे
उनका परस्पर देश भाषाओं में व्यवहार होता था।

“सदसीद्विवेक कवी बुद्धिः पण्ड्य पण्ड्यं राजा
अस्यैति सपीठतः। जो बुद्धि सदसीद्विवेक करने वाली
होय उसका नाम पण्ड्य है और वही पण्ड्य नाम
विवेक युक्त बुद्धि जिसको होय वही पीठत होता
है।”

Date

संन्यास विवेचन

२५

Notes

“वेदमनन्त हैं तो कोई भी पुरुष स्वको पढ़
वाँदख सी न सकेगा और कोई भी पूर्ण विद्वान् न
हो सकेगा।”

फिर संन्यासियों ने रुकंशंकर दीग्वजय
पुस्तक खालिया उसमें बहुत सी मध्याकथा लिखवायी
है उसमें दण्डी लेमा और गिरि, पुरी आदिक गोसां
लेमा अत्यन्त प्रीति करते हैं तथा रामा नुज दीग्वजय,
निंवाकि दीग्वजय, माधव दीग्वजय साधु कि दीग्व-
जय, बल्लभ दीग्वजय, कबीर दीग्वजय और बाणक
दीग्वजयादिक अपनी बड़ई के वास्ते लोगों ने मिरास
जाल ग्रन्थ रच लिये हैं।

शेकशावय केई सम्प्रदाय के पुरुष नहीं थे किन्तु
वेदोक्त चार आश्रमों के बीच संन्यासाश्रम में थे पण्ड्य
उनके विषय में लोगों ने सम्प्रदाय की नंई व्यवहार
कर रखवा है।

दश नाम लोगों ने पीढ़ी से कल्पित कर लिये हैं, जैसे कि
किसी का नाम देवदत्त होय इसके अन्त में दश प्रान्त
के शब्द रखते हैं कि १. देवदत्ताश्रम, २. देवदत्त तीर्थ
३. देवदत्तानन्द सरस्वती, इसी का दूसरा भेद कि देवदत्त
सरस्वती, ४. देवदत्त गिरि, ५. देवदत्त पुरी, ६. देवदत्त
पर्वत, ७. देवदत्त सागर, ८. देवदत्तारण्य, ९. देवदत्त
१०. देवदत्त भारती, ये दश नाम रच लिये हैं, फिर इनमें
जुंमैरी, शास्त्र, भूगोवर्धन और ज्योतिषमठ, ये चार प्रान्त
के मठ मानते हैं और दीण्डिया ने, रामोद, नृसिंह

नारायण इत्यादिक दण्डों के नाम रख लिये हैं, उसमें यज्ञोपवीत बांधते हैं उसका नाम रत्न मुद्रा रक्खवा है, ऐसी बहुत कल्पना दी गई है।

किन्तु जो ब्रह्मावस्था में नाम रहता था सोहि सब स्रष्टा में रहता था जैसे कि जेगी बल्य सासुर पंच शिख और बोध्य, ऐसे नाम सन्यासियों के महाभारत में लिखे हैं, इससे जाना जाता है कि मिथ्या कल्पना दण्डों लोगों ने कर लिया है परन्तु दण्डों लोग सनातन सन्यासियों हैं क्योंकि मनु स्मृत्यादिकों इनका व्याख्यान देवते में और, आश्रमा है, और गोसाईं लोगों ने भी ब्रह्मा इत्यादिक मदी शब्द कल्पित कर लिया है, जैसे कि वैरागी आदिकों ने नारायण दास, इससे बड़ा भारी बिगाड़ गया कि नीच और उत्तम की परीक्षा ही नहीं होती।

“ श्री कृष्ण विद्वान् धर्मात्मा और जैतीन्द्र्य वै, ऐसा महाभारत की कथा से यथावत् निश्चय होती है। ”

“ बुद्धाचार्य व्यास जी के पुत्र परीक्षित के जन्म से सौ बरस पीछे मर गया था, परीक्षित का जन्म पीछे मया है सो मोक्षधर्म पर्व में महाभारत महाभारत में लिखा है। ”

“ महाभारत की शीत से और युक्ति से भी वह निश्चय होता है कि ब्रह्मादिक सब । ”

हिमालय में रहते थे क्योंकि इस भूमि में उनके विद्व पये जाते हैं, स्वर्गद्व वन इन्द्र का बाग था पुष्कर में ब्रह्मा ने यज्ञ किया था, कुपेक्षेत्र में देवों ने यज्ञ किया।

“ इस तक तक ब्रह्म लोक, कैलाश, कुंठ, इन्द्र वरुणा, कुबेर, वसु, अग्न्यादिक आठ वे सुपारियों का इन सब के आन तक उत्तर स्वर्ग में विद्यमान होना, महाभारत और केदार श्रृंखलादिकों में सबके जोर चिह्न लिखे हैं उनके प्रत्यक्ष का होना। ”

“ मनुष्यों की प्रथम सृष्टि हिमालय में भई थी, फिर धीरे-धीरे बढ़ते चले गये वैसे सब भूगोल में मनुष्य वास करने चले और फैलते भी चले सो जितने पुरुष हैं मनुष्य सृष्टि में वे सब हिमालय उत्तराखण्ड से ही बढ़े हैं सो उत्तराखण्ड में ३२ करोड़ मनुष्य प्रथम थे सब पर्वतों में, फिर जब बहुत मनुष्य बढ़े तब चारों ओर फैल गये उनमें से जो विद्या बल पराक्रम दिगुरों से युक्त थे वे ब्रह्मादिक देव कहते थे और उनको गद्दा पर जो बैठता था उसका नाम ब्रह्मा पड़ता था, वे मे ही महर्षि, विष्णु, इन्द्र, कुबेर और वरुणादिक नाम पड़ते थे जो से भी थोड़ा पुरी में जो गद्दा पर बैठता था उसका नाम जनक पड़ता था। ”

“ सो उन मनुष्यों में से बहुत कुछ कर्म करने वाले थे उनको हिमालय से निकाल दिया, वे हिमालय

से दीक्षा देश में आकर रहते थे फिर बड़े कुकर्म करने को लग गये थे उनका नाम रक्षस पहा और कुछ उन डाकुओं में से अच्छे थे उनका नाम देव पहा पड़ गया था, इन देव और राक्षसों से हिमालय वसी देवों का वैर बन गया था।

“शुक्राचार्य देवों का गुरु था और बृहस्पति देवों का, हिमालय में देवों के राजस्थान थे इससे देवों का बल अधिक नहीं चलता था सो अब उस हिमालय देवलोक में कोई नहीं है किन्तु जो सब जो पर्वत वसी हैं

“शुक्राचार्य देवों का गुरु था और बृहस्पति देवों का, वे दोनों अपने-चेलों को विद्या पढ़ाते थे, जब जिसका बल बूढ़ पराक्रम बढ़ता था उनका विजय होता था परन्तु देवीविद्येशों में अच्छे होते थे और हिमालय में देवों के राजस्थान थे इससे देवों का अधिक बल नहीं चलता था, सो अब हिमालय देवलोक में कोई नहीं है किन्तु सब जो पर्वत वसी हैं वही देवों का परिवार है, आर्यावर्त आदि देशों में जितने उत्तम आचार वाले मनुष्य हैं वे देवों के परिवार हैं और जितने हवसी आदि काल भी जो मनुष्यो के मांस को खाते हैं वे राक्षस और दैत्य कुल के हैं, सो ब्रह्मा आदि इतिहासों से स्पष्ट निश्चित होता है सो इसमें कुछ संदेह नहीं।”

“कोई कहता है कि मैं रसायन बनाता हूँ और

दूसरा कहता है कि मैं पारे का भव्य बनाता हूँ उसको कोई खोले तो बूढ़ से जवान हो जाता है यह भी मिथ्या हो जानना।

“परन्तु आजकल अंगरेज के राज्य में से कुछ सुधरना और सुख भया है, जो अब अच्छे २ बृहस्पति प्रमादिक व्यवहार, वेदादिक विद्या का पठन और पाठशाला पावाशा मूर्ति पूजा आदि कों का त्याग करें तो इनको बहुत सुख हो जाय, क्यों कि राज्य का आजकल बहुत सुख है, धर्म विषय में जो जैसा योग्य वैसा करें और नाना प्रकार के पुस्तक भी यन्त्रालयों के स्थापने से सुगमता से मिलती हैं अच्छे २ मार्ग शुद्ध बन गये हैं तथा राजा और दरिद्र को भी वात शान्ति में सुनी जाती है, कोई किसी का जबरदस्ती से पदार्थ नहीं छीन सकता, अनेक प्रकार की पाठशाला विद्या पढ़ने के वास्ते राज प्रेरणा से बनती है और बनी भी हैं उनमें बालकों की अध्यापन शिक्षा होती है और पढ़ने से आजीविका भी राजघर में पढ़ने वाले को होती है किसी का बन्धन वा दराड राजघर से नहीं होता, जिसमें जिसको खुशी होय उसे वह करे अपनी प्रसन्नता से, देश में मनुष्यों की अत्यन्त वृद्धि हुई है और धृष्टि भी स्तन आदिकों से बहुत हो गई है, वनाशिक नहीं रहे हैं, इस वक्त लड़ाई बखेड़ा गदर नहीं होते हैं और व्यवस्था राज प्रबन्ध से सब प्रकार से अच्छी बनी है।”

अनु किंतु नीचात हमको अपनी बुद्धि से अच्छी आलुम नहीं देती हैं, हमको प्रकाश करने में जानते वे बड़े बुद्धिमान हैं, हमने इन बातों में गुरा समझा होगा परन्तु मेरी बुद्धि में इन बातों में गुरा नहीं देख पड़ते, इससे इन बातों को मैं लिखता हूँ शक तो यह बात है, नोन और पौन रोटी में जो कर लिया जाता है वह मुझको अच्छा नहीं मालूम देता क्यों कि नोन के बिना दीरद का भी निबोह नहीं होता किन्तु नोन की सबको आवश्यकता है।

और वे मजुरी में हलत से जैसे से निबोह करते हैं उनके ऊपर भी यह नोन का कर दण्ड लुप्त रहता है, इससे दीरदों को बलेश पड़ता है इससे ऐसा होय कि मद्य अफीम गांजा भाग इनके ऊपर चौगुना कर स्थापन होय तो अच्छा बात है क्योंकि नशादिकों का हूटना ही अच्छा है और जो मद्यादिक बिल्कुल हूट जाय तो मनुष्यों का सेहो भाग्य है क्यों कि नशा से कि सो को कुछ उपकार नहीं होता परन्तु रोग निवृत्ति के वाले औषधार्थ तो मद्यादिकों की प्रवृत्ति रखनी चाहिए क्यों कि बहुत से ऐसे रोग हैं जिनके मद्यादिक ही निवृत्ति कारक हैं औषध है सो वैद्यक शास्त्र की सीत से उन रोगों की निवृत्ति हो सकती है,

तो उनको गृहशक्ति जब रोग न हूटे फिर रोग के हटने के पीछे मद्यादिकों को कभी गृहशक्ति न करे क्यों कि जितने नशा करने वाले पदार्थ हैं वे सब बुद्ध्यादिक बुद्ध्यादिकों के नाशक हैं इससे इनके ऊपर ही कर लगाना चाहिये और लवशादिकों ऊपर न चाहिये, पौन रोटी से भी गरिब लोगों को बहुत क्लेश होता है क्यों कि गरिब लोग कहीं से घास के दान करके ले आये वाल कड़ी का भार उनके ऊपर कौड़ियों के लगे से उनके अवस्थ क्लेश होता होगा, इससे पौन रोटी का जो कर स्थापन करना हमसे सोयी हमारी समझ से अच्छा नहीं।

“तथा चौर डाकू पर स्त्री गामी और भूषा के करने वाले इनके ऊपर ऐसा दण्ड होना चाहिये कि जिस को देना देख वा सुने के सब लोगों को भय हो जाय और उन कामों को छोड़ दें क्यों कि जितने अनर्थ होते हैं सो जैसा मनुस्मृति राजधर्म में दण्ड लिखा है वैसा ही करना चाहिये जब कोई चोरी करे तब दयावत निश्चय करके इससे अवश्य चोरी की है कुत्ते के पंजे की नाई लोहे का चिह्न राजा बना रखे उसको अग्नि में लपा के ललाटे के भों के बीच में लगा दे कुछ बेतभी इसको मार दे और राधे पै चढ़ा के नगर के बीच बाजार में वृत्तियां भी लगती जाय और सुमाया करे फिर उनको कुछ धन दण्ड दे अपवा छोड़ दिन जेहलखाने में रखे वहाँ से

Date

अध्याय-विवेचन १०८/Notes

पाव भर तक चने खाने को दे और रात भर पिस
वावे न पीसे तो वहां भी उसको कुत्ते बैठे और
दिवस में कीठन काम ठहरे करावे जब तक
वह निर्बल न हो जाय परन्तु ऐसा बहुत दिन न
रखे वे जिसे कि मर न जाय फिर उसको
दोती न देन शिक्षा करे कि सुनवाई तैय्य मनुष्य
होके ऐसा बुरा काम किया कि तेरे ऊपर ऐसा दण्ड
हुआ, हम को भी तेरा दण्ड देख के हृदय में बड़ा
दुःख हुआ मया और सब मलेखादिको ही के व्यवहार
करना फिर ऐसा काम कभी न करना चाहिये
काम करना चाहिये जिसे राजघर और सभा में
लोगों के ऊपर ऐसा जो कीठन दण्ड दिया गया
स्त्री तथा प्रजा में तुम लोग प्रीतिष्ठा होय और आपलोगों
के ऊपर ऐसा जो कीठन दण्ड दिया गया सो केवल
आप लोगों के ऊपर नहीं किन्तु सब संसार के ऊपर
यह दण्ड लगा है जिसे इस दण्ड को देखवा सुनके
सब लोग भय करें और फिर ऐसा कोई काम न करें
ऐसी शिक्षा जितने बुरे कर्म करने वाले हैं उनको
दण्ड के पीछे अवश्य करनी चाहिये क्यों कि दण्ड का
तो इनको सदा स्मरण रहे और हठी वा विरोधी न
बन जाये इस वास्ते शिक्षा अवश्य करनी चाहिये
केवल शिक्षा वा केवल दण्ड से वा अत्यन्त दण्ड
से सुधार नहीं सके किन्तु दोनों से मनुष्य सुधार
सके हैं फिर भी बड़ी चोरी करे तो वह चोरी करे

Date

अध्याय-विवेचन १०९/Notes

तो उसका हाथ काट डालना चाहिये, फिर भी वह
न माने तो उसको छा डाल से मार डालना चाहिये,
किसी दिन उसको अंगरेवों से नि काल डाले, किसी
दिन कान काटे किसी दिन नाक और सब जगह
उसको घुमाना चाहिये कि जिसको सब देखें फिर
बहुत मनुष्यों के सामने उसको कुत्ते से चिथवा डालें,
ऐसा दण्ड एक पुरुष को होय तो उसके राज घर में
कोई चोरी की इच्छा भी न करेगा और राजा को भी
इनके प्रबन्ध में बड़ा आनन्द होगा नहीं तो प्रबन्ध
बड़े क्लेश हो लेंगे, और साधारण दण्ड से वे कभी सुधे
नहीं होंगे, डाकुओं को भी चोरी की नई दण्ड देना चाहिये
और जुआ करने वालों को एक बार करने से ही बुरी
हवाले से जैसा कि चोरी का लिखा गंध पर चढ़ाना दिक्
सब करके फिर कुत्ते से चिथवा डालना चाहिये क्यों
कि चोरी पर स्त्री गमन और जितने बुरे कर्म हैं वे जुबानी
से ही होते हैं इससे उनके सहाय करने वालों को भी
ऐसा ही दण्ड देना चाहिये क्यों कि जितने लड़कियां
चोरी पर स्त्री गमन आदिक इनसे ही उत्पन्न होती हैं इससे
इनके ऊपर दण्ड देने में राजा कुछ घोड़ा भी आलस्य
न करे सदा तत्पर रहे महाभारत में एक दृष्टान्त
निरवा है कि सोने दाँदी के आभूषण और खजाने
पदार्थ धरे हैं उसको कोई स्पर्शन न करे तब जानना
कि राजा है और घनाद्व लोग लारवहां रुकें वों की
दुकान का किबहु कभी नहीं लगावे और रात दिन

कोई किसीका पदग्रहण ठीक तब जानना कि धर्मशास्त्रों के अनुसार ऐसा उपाय दण्ड देना चाहिये कि सब मनुष्य न्याय में चलें न्याय से कोई नहीं, जब स्त्री का पुरुष व्यभिचार करे अर्थात् पर पुरुष से स्त्री सम्भोग करे, पर स्त्री से पुरुष, जब उनका ठीक निश्चय हो जाय तब स्त्री के ललाट में अर्घ्य में के बीच में पुरुष को लंगोन्ध्र का लोहे का चिह्न अग्नि में तपा के लगाने तथा पुरुष के स्त्री की इन्द्रिय का लोहे का चिह्न अग्नि में तपा के ललाट में लगाने जिसको सब देवता करें फिर उनकी रबूब फजीहल करें भी रबूब फजीहल करें और कुछ धन दण्ड भी करें, तब बहुत स्त्रियों के सामने स्त्री को कुत्ता से विधवा डालें और पुरुष को बहुत पुरुषों के सामने लोहे के तश्त को अग्नि में तपा के उसके ऊपर सोवा दे, फिर उसके ऊपर घुमावे, उसी पथ के ऊपर उसका मरणा हो जाय, ऐसा दण्ड देवता सुनके फिर कोई व्यभिचार कभी न करेगा।

“और सरकार कागज बेचती है कागजों पर बहुत सा धन बढ़ा दिया है इससे गरीब लोगों को बहुत क्लेश पहुंचता है सो वह बात राजा को करनी उचित नहीं, क्योंकि इसके होने से बहुत गरीब लोग दुःख पाकर बैठे रहते हैं, कचहरी में बिना धन से कुछ बात नहीं होती, इससे कागजों के ऊपर जो

बहुत कर लगाता है सो मुक्त को अच्छा मालूम नहीं देता, इसको छोड़ने से ही प्रजा में आनन्द होता है, क्योंकि योने से ले के अगोचर धन का ही स्वर्ग देव पड़ता है, चाय होना तो पीछे नाना प्रकार के साक्षी झूठ सच बना लेते हैं यहां तक कि सत्त्व खाने को देओ और झूठी गवाही हजार वक्त दिला लो, सो जैसा मनुस्मृति में दण्ड लिखा है वैसा दण्ड चले तो खाने पीने के वास्ते झूठी साक्षी देने को कोई तैयार नहीं होय, अर्थात् ननक मन्थेति प्रेत्य स्वाच्छिद्येते” इसका यह अभिप्राय है कि यह निश्चय हो जाय कि इसने झूठी साक्षी दी तब उसको जीम कचहरी के बीच में काट ले वही अवाक नाम जीम रहित जो नरक उसको प्रत्यक्ष होय क्योंकि राजा प्रत्यक्ष न्याय करता है, उसी वक्त उसके प्रत्यक्ष ही फल होना चाहिये और जितने अमान्य विचारपीत राजधर में हों वे उनके ऊपर भी कुछ दण्ड व्यवस्था रखनी चाहिये, क्योंकि वे भी सच झूठ के अन्यन्त विचार में तत्पर होके विचार में अत्यन्त तत्पर होके न्याय ही करें, देखना चाहिये कि जहां एक अर्जी पत्र दिया उसके ऊपर विचार पीत नै विचार करके अपनी बुद्धि कानून की रीति से एक की जीत की और दूसरे का पराजय, जिसका पराजय भया उसने उसके ऊपर जो हाकिम होता है उसके पास फिर अपील करे सो प्रायः जिसका प्रथम विजय भया था उस को दूसरे स्थान में पराजय होता है और जिसका परा-

Date

सत्याधि-विवेक

११२/Notes

जय होता है उसका विजय, फिर उसे ही जब तक धन नहीं लुकता दोनों, का तब तक विलासतण्डित ही चले जाते हैं। प्रत्यक्ष: रही सलो गइस बाव से ठठ के मोर विवाह जाते हैं। इससे चाहिये कि विचार करने करने वाले के लक्ष्मी ठण्ड की व्यवस्था होनी चाहिये जिससे वे अत्यन्त विचार के न्याय ही करें। ऐसा आलस्य न करें कि ऐसा हमारी बुद्धि में मारा देस कर दिया। तुमको इच्छा होय तो तुम आलो इमील कर देओ। ऐसी बातों से विचार नीत में आलस्य में आ जाते हैं, विचार पीत की अत्यन्त परीक्षा करने चाहिये कि अर्थ से डरते हैं और विद्या बुद्धि से डरते हैं। काम को धन में मोह भव शोकादि के दोष निम्न न हों और अन्तर्धर्मा भी तो सब का परमेश्वर उरसे हो जिनको भय होय और से नहीं तब उस राजा की प्रजा को सुरव हो सकता है अन्यथा नहीं।

और पुलिस का प्रबन्ध जो दरला है उस में अत्यन्त मद्र पुरुषों को रखना चाहिये क्योंकि न्याय का क प्रथम स्थान यही है इससे ही और प्रायः बाव विवाद के व्यवहार चलते हैं, इस स्थान में जो पक्षपात से अन्ध लिखा जायगा रद्द जायगा और अन्यथा व्यवहार भी प्रायः हो जायगा इससे पुलिस में अत्यन्त श्रेष्ठ पुरुषों को रखना चाहिये अथवा जैसे कहिले लैसे जो की दार न इले उ में इतना था इससे बहुत अन्धाय नहीं होता था। तब से

Date

सत्याधि-विवेक

Notes

पुलिस का प्रबन्ध भया है तब से बहुत अन्यथा व्यवहार हो सुनने में आता है।

“चौर गाय बेल में स केरी और मेइ आदिक मोर जोत है इससे प्रजा को बहुत क्लेश प्राप्त होता है और सैनिक पक्षार्थी की हानि भी होती है क्योंकि एक गेया १० सेर दूध की है कोई ८ सेर है: सेर ५ सेर कोई २ सेर तक इसके मध्य है: और नित्य दूध गिना जाय, कोई दस मास तक दूध देती है कोई छः मास तक उसका मध्य आठ मास गिना जाता है सो एक मास भर में सवा चार मन दूध होता है उसमें चावल और चीनी भी डाल दें तो सो पुरुष तृप्त हो जायेंगे और ऐसी ही लिये तो ८० पुरुष तृप्त हो जायेंगे और ८०० वा ६४० पुरुष तृप्त हो सकते हैं फिर उसके बड़े और बकीड़े को देओ कोई गाय १५ देके बिआती है कोई दस देके उसका मध्य हमने १२ क्त रख लिया, इससे ६६०० सो पुरुष तृप्त हो सकते हैं फिर उसके बड़े और बड़े को देओ उनसे बहुत बेल और गाय लेंगी, एक गाय के लारव मनुष्य का पालन हो सकता है उसके मास के उसके मास से ८० पुरुष तृप्त हो सकते हैं फिर दूध और पशुओं की उत्पत्ति का मूल ही नष्ट हो जाता है जो बेल आर्या वर्त में पांच रुपयों में आता था अब ३० में भी नहीं आता है, गांव और नगर के पास पशुओं के चरने के वास्ते उसकी सीमा में कुछ भूमि रखनी चाहिये जिसमें विवे पशु चरें जैसी

हुआदिक से मनुष्य के शरीर की पुष्टि होती है
वैसे सूर्य अग्नि आदिकों से नहीं होती और बुद्धि भी
नहीं बढ़ती इससे राजा को यह बात अवश्य
करनी चाहिये कि जिन पशुओं से मनुष्य के
व्यवहार सिद्ध होते हैं और उपकार होता है वे
कभी भी न मारे जाय ऐसा प्रबन्ध करना चाहि-
ये, जिससे सब मनुष्यों को सूर्य होय वैसा ही
प्रजास्थ पुरुषों को भी करना चाहिये।

“सो राजा जिससे प्रजा प्रसन्न रहे और प्रजा
से राजा प्रसन्न रहे यही बात करना सबको उचित
है। देवना चाहिये कि महामात में सगर राजा
की एक कथा लिखी है उसका एक पुत्र असमंजस
नाम का था, उसको अत्यन्त शिक्षा की गई परन्तु
उसने अच्छा आचार व विद्या ग्रहण नहीं की और
प्रसाद में ही चित्त देता था जो सब उसकी सुलावस्था
नहीं थी भी हो गई थी परन्तु उसका शिक्षा कुहन
लगी, राजादिक श्रेष्ठ पुरुषों को उसके ऊपर
प्रसन्न नहीं हुई, फिर उसका विवाह भी
करा दिया, एक दिन असमंजस सरयू में स्नान
करने के लिये गया था, वहां प्रजा के आठ बरस
बरस के बालक जल में स्नान करते थे सो उनमें
से एक बालक काहर निकला असमंजस ने
उसको पकड़ के गहरे जल में फेंक दिया, सो
वह बालक डूबने लगा तब किसी प्रजास्थ

पुरुष ने बालक को पकड़ लिया, उसके शरीर में
जल प्रविष्ट होने से वह मूर्छित हो गया, उसकी दशा
को देव के असमंजस बहुत प्रसन्न मया और हंस के
घर को बला गया, कोई बालक उसके पिता के पास गया
और कहा कि तुम्हारे बालक यह दशा राजा के पुत्र ने कर
दी यह सुनके उसके माता पिता और सब कुटुम्ब के
लोग बड़े दुःखी भये उसको देव के, फिर बालक
को उठा के जहां राजा सगर की समालयी थी वहां
को चले राजा सभा के बीच में सिंहासन पर बैठे थे
सो उनके आते देव के फट उठे उनके पास चले
गये और पूछा कि इस बालक को क्या भया, तब उस-
की माता शैनेलगी राजा ने देव के ठने को बहुत
धैर्य दिया कि तुम रोओ मत, बात कह दो कि क्या
भया तब बालक का पिता बोला कि हमारे दोड़े मर
हैं कि माय है कि आपके जैसे राजा हम लोगों
ऊपर हैं दूर से देव के बाल के ऊपर कृपा
करके दोड़ के आना और डूबना, यह प्रजा का
बड़ा माय है इस प्रकार का राजा होना, फिर राजा
ने पूछा कि तुम अपने बात कहो तब उसने राजा
राजा को कहा कि एक तो आप है और एक
आपका पुत्र है जो कि अपने अर्थ से ही प्रजा को भाँसे
लगा और ऐसा भया था सबकुल वैसा सब हाल
राजा से कहा दिया, तब राजा ने वहां जो बालक के
उसका जल निकलवा डाला और आधी धिया से

Date

सत्याषि विवेचन

१९६/Notes

उसी समय बालक स्वस्थ हो गया, फिर सभी की बीच में बालक, उसके माता पिता और जिसने बालक को निकाला था वह सब भी वहां थे, फिर राजा ने सिपाहियों को आज्ञा दी कि असमंजा की मुस्कं चढ़ा के ले आओ, सिपाही लोग गये और वैसे ही उसके बांध के लेश्म असमंजा की स्त्री भी समारचली छड़ी और सभी में खड़े कर दिये, राजा ने पुत्र की स्त्री से पूछा कि तू इसके साथ जाने में प्रसन्न है वा नहीं, तब उसने कहा कि अब जो दुःख हो वा सुख होय परन्तु मैं सम्मम्य समाप्य से ऐसा पति मिला सो मैं साथ हो रहूंगी पुत्रक नहीं, तब राजा ने असमंजा से कहा कि तेश माग्य कुछ प्रच्छाया कि यह बालक मरा नहीं जो यह मर जाता तो तुम्हको बुरे हवाल से न्हे से चोर की नाई में मार डालता परन्तु तुम्हको मरणा तक का बनवास देला हूँ, सो तू कभी गांव वा नगर में अथवा मनुष्यों के पास खड़ा रहा वा गया तो वे तुम्हको चोर की नाई मार डालेंगे इससे तू ऐसे वन में जा के रह कि जहां मनुष्य का दर्शन भी न होय, और सिपाहियों को हुकुम दे दिया कि जाओ तुम इन दोनों को घोर वन में छोड़ आओ, उनको न अच्छे रक्ख दिव न सवारी दी, न धन दिया किन्तु जैसे सभा में खड़े थे वैसे ही छोड़ आओ।

रुक भर्त नाम का राजा था, जिसके नाम से इसे देश का भरत रवण्ड नाम रक्खवा गया,

Date

सत्याषि विवेचन

Notes

उसके भी नौ पुत्र थे सो २५ वर्ष के ऊपर सब प्रिये थे परन्तु मूर्ख और प्रमादी थे, राजा ने और प्रजास्य पुरुषों ने विचार किया कि इनमें से एक भी राजा होने योग्य नहीं है सो भरत राजा ने इस्तिहार करके सब पुरुष और स्त्री लोगों को बुलाया जो प्रीतिष्ठत राजा और प्रजास्य थे, सो एक मैदान में समाज स्थान बनाया, उसके बीच में एक मंचान भी गाड़ दिया, सो जब सब लोग इकट्ठे भये, किसीको विदित न मथा कि राजा क्या करेगा और क्या कहेगा फिर मंचान के ऊपर चढ़ कर राजा ने सब से कहा कि जिन राजा व अथवा प्रजास्य रही सो लोगों का पुत्र इस प्रकार का दुष्ट होय उसको ऐसा ही दण्ड देना उचित है जो कि इस वक्त हम अपने पुत्रों को दंगे, सो सब सज्जन लोग सदा इस नीति को मानें और करें फिर मंचान से उतरे और नव पुत्र भी बीच में खड़े थे सब समाज वाले देख भी रहे थे और उनकी माता भी सो सब के सामने खड़े हाथ में लेके नवां के सिर काटे के मंचान के ऊपर बांध दिये, फिर भी सब से कहा कि जो किसी का पुत्र ऐसा दुष्ट होय उसको ऐसा ही दण्ड देना चाहिये क्यो जो हम इनका सिर न काटते तो ये हमारे पीछे आपस में लड़ें और राज्य का नाश करते और धर्म की मरवा को तोड़ डालते इससे राजपुत्र वा प्रजास्य बंधना दुःख लोग नो प्रेष्ठ धनादय लोग उनको ऐसा ही करना उचित है।

अथ राजा धन और धर्म सब नष्ट हो जायेंगे इसमें कुछ सन्देह नहीं देखना चाहिये।
 आर्यावर्त देश में ऐसे राजा और प्रजापति प्रेष पुरुष होते थे जो इस वक्त आर्यावर्त देश में ऐसे अप्रवाच हो गये हैं कि जिनकी संख्या भी नहीं हो सकती। सर्वत्र भूगोल में कोई देश ऐसा नहीं था, ऐसा प्रेषाचार भी किसी देश में नहीं था परन्तु इस समय पाषाणादिक मूर्तिपूजनादिक नारवर्तों के चक्राकितान्तिक सम्प्रदायों के वादविवादों से, भागवतादि ग्रन्थों के प्रचार से ब्रह्मचर्य धर्म और विद्या के छोड़ने से ऐसा देश बिगड़ा है, कि भूगोल में किसी देश की ऐसी दुर्दशा नहीं भई जैसी दुर्दशा महाभारत युद्ध के पीछे आर्यावर्त देश की भई है। सांख्यलिंगीरजों के राज्य में आर्यावर्त देश में कुछ सुख भया है जो इस वक्त वैदादिक पढ़ने लगे, ब्रह्मचर्य धर्म चली सतर्क कर, कन्या और बालक सब प्रेष शिक्षा और विद्या वाले होवें, इन मत मतान्तरों के वादविवाद तथा आग्रहों को छोड़ें सब धर्म और परमेश्वर की उपासना में तत्पर होवें तो इस देश की उन्नति और सुख हो सकती है अन्यथा नहीं।

“पञ्चात्म्य जो होता है कि प्रत्येकानिर्गत नहीं होता किन्तु अपने कर्तव्य और कर्तव्यपूर्ण

का निर्वर्तक होता है।

“वर्शाश्रम की सत्यावस्था शास्त्र की रीति से हो उसका हृदय करने में करना सब मनुष्यों के अनुपकार का कर्म है यह तृतीय समुदास में विस्तार से लिख दिया है वहीं देख लेना, यज्ञोपवीत केवल विद्यादिक गुणों का और अधिकार का विद्वांस का सत्यन्त साहस से जोड़ना इससे भी मनुष्यों का उपकार नहीं होता किन्तु शास्त्र की रीति से वर्शाश्रम का स्थापन करना, इससे मनुष्यों का उपकार हो सकता है, संसार-चार की रीति से नहीं।”

“वे ब्राह्मणादिक जो वर्शावाचक शब्द हैं उनके अतिवाचक ब्राह्मण लोग जानके निषेध करते हैं जो केवल उनको भूम है, किन्तु शास्त्र की रीति से मनुष्यादिक अतिवाचक शब्द हैं, जो मनुष्य वृक्षादिक की रकता कोई नहीं कर सकता, जो मनुष्यादिक ब्राह्मण अतिवाचक शास्त्र में लिखे हैं, जो सत्य ही है।”

“इदानीं से किसी का धर्म नहीं बढ़ता है और न किसी का घटता है इसमें भी सत्यन्त जो सत्यन्त साहस करना कि सब के साथ रवाना अथवा किसी के साधन रवाना वही धर्म मान लेना यह भी अनुचित बात है किन्तु नष्ट भ्रष्ट संस्कार हो न पढ़ीं के खाने और पीने से मनुष्य का अनुपकार होता नहीं है अन्यत्र नहीं।”

“वार्षिक उत्सवादिकों में भेला करना इसमें भी हमको सत्यन्त प्रेष गुण मालूम नहीं देता,

